समसामयिक राजनीति/इतिहास/संस्कृति की श्रेष्ठ पुस्तकें

शब्द संस्कृति और विचार	डॉ. रेखा चतुर्वेदी	600.00
आतंक : तुलसी की दृष्टि में	डॉ. बद्री नारायण तिवारी	200.00
कला संस्कृति और मूल्य	डा. सुरेन्द्र वर्मा	100.00
यूरोपीय पुनर्जागरण कला	डॉ. कुसुमदास	500.00
प्रथम स्वतंत्रता की झलकियाँ	डॉ. मोतीलाल भार्गव	150.00
भारत के शहीद	मनमोहन गुप्त	175.00
भारत की वीरांगनाएँ	अखिलेश मिश्र	50.00
भारतीय चिन्तक	डॉ. पृथ्वीनाथ पाण्डेय	150.00
भारतीय इतिहास में नारी	प्रो. सुगम आनन्द	300.00
कलचुरि चेदि अभिलेखों का सांस्कृतिक अध्ययन	डॉ. आभा त्रिपाठी	500.00
कौशाम्बी की मृण्मूर्तियाँ	डॉ. कु. विभा मिश्रा	500.0
मध्ययुगीन समाज और संत कबीर	प्रो. प्रतिमा अस्थाना	150.00
मध्यकालीन इतिहास के स्रोत	प्रो. हेरम्ब चतुर्वेदी	350.00
ब्रिटिश कालीन आर्थिक इतिहास	डा. आभा तिवारी	250.00
भारतीय संस्कृति बनाम पाश्चात्य संस्कृति	डा. आभा तिवारी	200.00
कल्पवृक्ष	जगदीशचन्द्र चतुर्वेदी	60.00
महावीर और अहिंसांचल	डॉ. रेखा चतुर्वेदी	200.00
भारतीय संस्कृति और कला	प्रो. विजय कुमार पाण्डे	500.00
भारतीय कला-सम्पदा	डॉ. ए.एल. श्रीवास्तव	300.00
वारेन हेस्टिंग्स	चतुर्वेदी द्वारिका प्रसाद शर्मा	125.00
हमारा स्वाधीनता संग्राम	जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी	50.00
5वीं-7वीं शताब्दियों का भारत	डॉ. विशुद्धानन्द पाठक	175.00
मत्स्य पुराण के अनुष्ठान एवं विधि विधान	डॉ. श्रीराम राय	230.00
वह ऐतिहासिक धमाका	मनमोहन गुप्त	50.00
प्रति सप्ताह	श्रीनरेश मेहता	175.00
सम्राट समुद्रगुप्त	डॉ. राधेशरण 'अनन्त'	50.00
भरतीय कला प्रतीक	डॉ. ए.एल. श्रीवास्तव	200.00
मुगलकालीन उत्तर भारत...	डॉ. शिवशंकर श्रीवास्तव	250.00

विस्तृत सूचीपत्र के लिए कृपया लिखें :– 0532-2427247 (शोरूम) 2615449 (निवास), 09415214223

साहित्य संगम, प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता

नया-100, लूकरगंज, इलाहाबाद-1

शोरूम : 17/33सी, महात्मागाँधी मार्ग, लक्ष्मीमार्केट, सिविललाइन्स, इलाहाबाद-1

Adhyayan

अध्ययन

Year : XXL

Vol. XV

2011

Chief Editor :

Professor Heramb Chaturvedi

History Department, University of Allahabad

A Bilingual Research Journal

of

The Bhartiya Itihas Adhyayan Sansthan

Allahabad

समसामयिक राजनीति/इतिहास/संस्कृति की श्रेष्ठ पुस्तकें

शब्द संस्कृति और विचार	डॉ. रेखा चतुर्वेदी	600.00
आतंक : तुलसी की दृष्टि में	डॉ. बद्री नारायण तिवारी	200.00
कला संस्कृति और मूल्य	डा. सुरेन्द्र वर्मा	100.00
यूरोपीय पुनर्जागरण कला	डॉ. कुसुमदास	500.00
प्रथम स्वतंत्रता की झलकियाँ	डॉ. मोतीलाल भार्गव	150.00
भारत के शहीद	मनमोहन गुप्त	175.00
भारत की वीरांगनाएँ	अखिलेश मिश्र	50.00
भारतीय चिन्तक	डॉ. पृथ्वीनाथ पाण्डेय	150.00
भारतीय इतिहास में नारी	प्रो. सुगम आनन्द	300.00
कलचुरि चेदि अभिलेखों का सांस्कृतिक अध्ययन	डॉ. आभा त्रिपाठी	500.00
कौशाम्बी की मृण्मूर्तियाँ	डॉ. कु. विभा मिश्रा	500.0
मध्ययुगीन समाज और संत कबीर	प्रो. प्रतिमा अस्थाना	150.00
मध्यकालीन इतिहास के स्रोत	प्रो. हेरम्ब चतुर्वेदी	350.00
ब्रिटिश कालीन आर्थिक इतिहास	डा. आभा तिवारी	250.00
भारतीय संस्कृति बनाम पाश्चात्य संस्कृति	डा. आभा तिवारी	200.00
कल्पवृक्ष	जगदीशचन्द्र चतुर्वेदी	60.00
महावीर और अहिंसांचल	डॉ. रेखा चतुर्वेदी	200.00
भारतीय संस्कृति और कला	प्रो. विजय कुमार पाण्डे	500.00
भारतीय कला-सम्पदा	डॉ. ए.एल. श्रीवास्तव	300.00
वारेन हेस्टिंग्स	चतुर्वेदी द्वारिका प्रसाद शर्मा	125.00
हमारा स्वाधीनता संग्राम	जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी	50.00
5वीं-7वीं शताब्दियों का भारत	डॉ. विशुद्धानन्द पाठक	175.00
मत्स्य पुराण के अनुष्ठान एवं विधि विधान	डॉ. श्रीराम राय	230.00
वह ऐतिहासिक धमाका	मनमोहन गुप्त	50.00
प्रति सप्ताह	श्रीनरेश मेहता	175.00
सम्राट समुद्रगुप्त	डॉ. राधेशरण 'अनन्त'	50.00
भरतीय कला प्रतीक	डॉ. ए.एल. श्रीवास्तव	200.00
मुगलकालीन उत्तर भारत...	डॉ. शिवशंकर श्रीवास्तव	250.00

विस्तृत सूचीपत्र के लिए कृपया लिखें :–

0532-2427247 (शोरूम)
2615449 (निवास), 09415214223

साहित्य संगम, *प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता*

नया-100, लूकरगंज, इलाहाबाद-1

शोरूम : 17/33सी, महात्मागाँधी मार्ग, लक्ष्मीमार्केट, सिविललाइन्स, इलाहाबाद-1

Adhyayan
अध्ययन

Year : XXL **Vol. XV**

2011

Chief Editor :
Professor Heramb Chaturvedi
History Department, University of Allahabad

A Bilingual Research Journal
of
The Bhartiya Itihas Adhyayan Sansthan
Allahabad

अध्ययन, खण्ड पन्द्रह, 2011

प्रकाशक : भारतीय इतिहास अध्ययन संस्थान
मुद्रक : साहित्य संगम, इलाहाबाद
ISBN : 978-81-8097-142-6

छत्तीसगढ़ के समाज एवं धर्म पर कबीर पंथ का प्रभाव

— राधेश्याम पटेल

"हुआ न होसी जीवना, तुम सा संत कबीर।
जग तारन को अवतरे, बीरन में महाबीर।।"

छत्तीसगढ़ की पिछड़ी जातियों के उत्थान में 'कबीर पंथ' के योगदान की चर्चा करने के पूर्व यह जानना अति आवश्यक है कि कबीर ने सामन्ती व्यवस्था में जकड़े हुए समाज के दलित और पीड़ित वर्गों के उत्थान के लिए क्या कार्य किया ? कबीर के सामाजिक और धार्मिक विचार क्या थे।

छत्तीसगढ़ में विभिन्न संस्कृतियों का जितना अच्छा, सम्यक समन्वय दृष्टिगोचर होता है, उतना अच्छा आयाम अन्यत्र नहीं मिलता। कबीर के व्यक्तित्व और उनके दर्शन की गरिमा छत्तीसगढ़ में तथा भारत के विभिन्न अंचलों में प्रचलित विभिन्न धर्मों जैन, बौद्ध, वैष्णव, शैव, शाक्त से कदापि कम नहीं था।

कबीर का वास्तविक स्वरूप समाज सुधारक का था, जिसमें व्यर्थ आडम्बरों, दिखावों, रूढ़ीग्रस्त परम्पराओं एवं मान्यताओं के प्रति स्पष्ट विरोध था। सच पूछा जाए तो कबीर का दर्शन सहज दर्शन था। वह किसी सम्प्रदाय या धर्म की संकीर्ण सीमा में कैद होने वाला नहीं था।

कबीर के शिष्यों में, विशेषकर कबीर पंथ के प्रणेता गुरू धनी धर्मदास जी ने उनके विचारों को आत्मसात् कर प्रचार-प्रसार किया। छत्तीसगढ़ में धर्मदास जी ने कबीर के विचारों का प्रचार प्रसार कर एक ऐसे समाज की रचना का प्रयास किया, जो समभाव से अनुप्रमाणित था। उच्च वर्गों से तिरस्कृत जिन पिछड़ी जातियों का प्रतिनिधित्व, कबीर ने किया, उन्हीं जातियों ने 'कबीर' और 'कबीर पंथ' को श्रद्धा की दृष्टि से देखा। छत्तीसगढ़ की पिछड़ी जातियों ने कबीरपंथ को स्वीकार कर छत्तीसगढ़ को कबीर पंथियों का गढ़ बना दिया है।

शोध छात्र, इतिहास, अध्ययन शाला, पं.र.शु.वि. रायपुर।

छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ का उदय भी मूलरूप से सामाजिक, धार्मिक समस्या, जातिभेद, धर्मभेद, वर्गभेद, छुआछुत, शोषण, रूढ़िवादि परम्परा, दिखावा आदि के निराकरण के लिए हुआ था। समाज में प्रचलित बुराई, ऊँच-नीच, धार्मिक कर्मकाण्ड, बाह्य आडम्बर, हवन-पूजन, यज्ञ-बलि आदि के प्रति कबीर पंथ ने अपनी आवाज बुलंद की। कबीर ने अपने समय के प्रचलित समस्त पंथों, धर्मों के सार तत्व को लेकर अपने विचारों को खड़ा किया तथा समन्वयात्मक सरल मार्ग प्रस्तुत किया। उनके विचारों और भावों में जो तीखापन और उत्तेजना है, वह सब तत्कालिन परिस्थितियों का प्रभाव ही कहा जा सकता है।

छत्तीसगढ़ की पिछड़ी जातियों के उत्थान में कबीर पंथ का योगदान, चर्चा के प्रसंग पर कबीर द्वारा व्यक्त विचारों का अध्ययन अग्र बिन्दुओं में समीचीन है।

1. सामाजिक प्रभाव

कबीर अपने युग के सामाजिक हलचल के प्रेक्षक थे। उनकी कवि दृष्टि सामाजिक समस्याओं के प्रति सजग थी। इसलिये समाज की जर्जर अवस्था का जीवित चित्र इनकी की जाने वाली रचनाओं में दिखाई पड़ता है। उनके व्यक्तित्व का निर्माण इतिहास के एक संक्रमण काल में हुआ था। अतः युगीन समस्याओं के अनुकुल ही उन्हें अपनी विचारधारा का भी निर्माण करना पड़ा।

स्वयं के कर्तव्यों का ज्ञान रखने वाले मानव के समष्टि स्वरूप का नाम ही समाज है। व्यक्ति के आचार विचारों के अनुरूप ही समाज का स्वरूप होता है। यही कारण है कि जब तक व्यक्तियों में किसी प्रकार के दोष उत्पन्न नहीं होते, समाज का स्वरूप सुंदर और सुव्यवस्थित रहता है, परन्तु व्यक्ति के कर्तव्यच्युत होते ही समाज में विश्रृंखलता आने लगती है। इसी विश्रृंखलता को दूर करने के लिए प्रायः युग के महापुरूषों का जन्म हुआ करता है। तभी तो वर्कले ने कहा है कि युग की विभूतियाँ युग प्रसूत होती हैं।[1] हमारे महात्मा कबीर मध्ययुग की ऐसी ही विभुतियों में से थे। यह कहा जाता है कि महापुरूष अपने समय की देन होते हैं।[2]

कबीर के युग का समाज निश्चित ही आज के समाज से भिन्न था, किंतु बहुत सी समस्याएं आज भी ऐसी हैं जिन्हें कबीर ने अपने समाज में देखा था और जिनसे उनकी चिंतनधारा प्रभावित भी हुई थी। कबीर को समाज सुधारक के रूप में सर्वाधिक प्रतिष्ठा प्राप्त है।[3] मानव समाज की वर्तमान समस्या पर विचार करना ही उन्होंने श्रेयस्कर समझा। जिस प्रकार एक दीपक को प्रकाशित करने के लिए दूसरे दीपक की आवश्यक्ता हुआ करती है, उसी प्रकार एक आत्मा में आध्यात्मिक शक्ति दूसरे आत्मा की सहायता से ही बहुधा जागृत हुआ करती है।[4]

कबीर ने तात्कालिक भारतीय समाज में प्रचलित समस्त अंधविश्वासों, रूढ़ियों तथा

मिथ्या सिद्धांतों द्वारा प्रचारित सामाजिक विषमताओं को मूलोच्छेद करने का बीड़ा उठाया और निर्ममतापूर्वक सभी पाखण्डों पर प्रहार किया। उन्होंने तत्कालिन सामन्तों तथा शासकों को लक्ष्य कर ऐसी अनेक बातें कहीं जिनसे भौतिक ऐश्वर्यों पर आधारित उनके झुठे अभिमान का मूलोच्छेदन हो। सामाजिक शोषण, अनाचार और अन्याय के विरूद्ध संघर्ष में आज भी कबीर का काव्य एक तीखा अस्त्र है। कबीर से हम रूढ़ीगत सामन्ती दुराचार और अन्यायी सामाजिक व्यवस्था के विरूद्ध डटकर लड़ना सीखते हैं। साथ ही यह भी सीखते हैं कि किस प्रकार शोषण के विरूद्ध अंत तक लड़ना चाहिए।

कबीर वर्ग विहिन समाज की स्थापना करना चाहते थे। कबीर की दृष्टि में वर्ग विभाजन समाज के कतिपय लोगों की स्वार्थ सिद्धि का स्वार्थ परक मात्र है। इस प्रकार का वर्ग विभाजन विकास में बाधक सिद्ध हो सकता है।[5] कबीर एक ऐसे समाज की स्थापना करना चाहते थे। जिसमें मनुष्य अपने व्यवसाय के आधार पर उच्च अथवा नीच न समझा जाए, उनके अनुसार मनुष्य न छोटा है, न बड़ा। उनके सामाजिक जीवन का आदर्श बहुत कुछ महात्मा गांधी के एतद् विषयक आदर्श के समान था।[6]

कबीर ने जातिगत, कुलगत, धर्मगत, संस्कारगत, शास्त्रगत सभी भेदों और विशेषताओं के जाल को छिन्न-भिन्न किया और ऐसी भूमि तैयार की जहाँ एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से मनुष्य की तरह व्यवहार करे। इस प्रकार बाहरी जंजाल को हटाकर उन्होंने साधारण मनुष्य को ऊपर उठाया और छोटी जातियों में आत्मगौरव का भाव भरा।

कबीर ने समाज और धर्म को विकृत करने वाली रूढ़ियों, कुरीतियों की आलोचना की है। कबीर की दृष्टि से किसी भी धर्म के मार्ग में बाधा उत्पन्न करने वाली बातें रूढ़ियां हैं। कबीर की चेतना, बुद्धि और सूक्ष्म दृष्टि समकालीन समाज में व्याप्त कुरीतियों और अंध विश्वासों को देखकर व्याकुल हो उठती हैं। उनके समय में हिन्दू समाज में वर्ण व्यवस्था का रूप विकृत हो गया है। ब्राह्मण और शुद्र का भेद अमिट था। शूद्रों को पूजा का अधिकार नहीं था। कबीर ने इस भेदभाव में कोई सार न देखकर कृत्रिम बातों के आधार पर बनी हुई वर्ण व्यवस्था का खण्डन किया।

"जों तोंहि कर्त्ता वर्ण विचारा, जन्मत् तीन दण्ड किन सारा।
जन्मत सूद मुए पुनि सूदा, कृत्रिम जनेऊ घालि जग दुंढ़ा।।"

वर्ण व्यवस्था का यह रूप उसके आरंभिक उद्देश्य के ही विपरीत हो गया। इसी वर्ण व्यवस्था का और भी कटु और विकृत रूप छुआछुत है जो समाज के भीतर और भी तीव्र भेदभाव को जागृत करने वाली है। कबीर ने इस पर प्रहार करते हुए कहा है कि[7]—

"काहै को कोजे पाड़े छोति विचारा, छोतिहिं ते उपज संसारा।
हमारै कैसे लोहु तुम्हारे कैसे दूध, तुम कैसे ब्राम्हण पांडे हम कैसे सूद।"
छोति-छोति करत तुम्हही जाए, तौ-ग्रभवास काहै को आए।

जनमत छोति मरत ही छोति,कहै कबीर हरि की निर्मल ज्योति।

संत कबीर ने अत्यंत साहस और निर्भिकता से उन विषमताओं पर कठोर प्रहार किया है,जिनसे मानव समाज उस समय अपनी वर्गगत और सांप्रदायिक सीमाओं और कुंठाओं से छिन्न-भिन्न हो रहा था।

कबीर प्रयत्नशील थे कि मानव जीवन से विषमता हटे समाज में सुख शांति की स्थापना हो। इन्होंने एक नये समाज की कल्पना की जो बाह्य से अधिक आभ्यांतर को देखेगा,जो मानवीय सामान्य भाव भूमि पर स्थापित होगा। वहां हिन्दू नहीं होगा, मुसलमान नहीं होगा, ब्राम्हण, शुद्र, काजी, मुल्ला, ऊँच-नींच, गरीब अमीर, पापी-पुण्यवान सबका बोध होगा। एक ही धर्मभाव,एक ही उपास्य और एक ही व्यावहारिकता होगी।[8] सद्गुरू कबीर के इस धर्म भाव को यथार्थ में जनवादी कहें तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

कबीर ने जाति-पाति के भेदभाव और छुआछुत के भेद भाव को मिटाने और दूर करने का प्रयास किया। बाह्याडम्बर, असत्य, अत्याचार, व्याभिचार, वर्णभेद के प्रति उद्भुत यही प्रतिक्रिया ही कबीर की वास्तविक क्रांति की भावना थी।

ब्राह्मण और शूद्र की ही नहीं, उन्होंने मुसलमानों और हिन्दुओं के बीच वैमनस्य,भेदभाव की खाई को भी पाटने का स्तुत्य प्रयास किया। दोनों धर्मावलम्बी एक दूसरे के मत की आलोचना करने में लगे रहते थे और स्वयं अपनी ओर नहीं देखते थे। कबीर ने इन्हीं कुप्रवृत्तियों की ओर इंगित कर दोनों संप्रदायों में सदृश्यता स्थापित करने का प्रयास किया। उन्होंने एक संप्रदाय विशेष का पक्ष नहीं लिया, अपितु दोनों के दोषों को निःसंकोच कह दिया—

ना जाने तेरा साहिब कैसा,
मस्जिद भीतर मुल्ला पुकारे, क्या साहिब तेरा बहिरा है?
चिंऊँटी के पग नेवर बाजे, सो भी साहब सुनता है,
पंडित होय के आसन मारै,लम्बी माला जपता है,
अंदर तेरे कपट कतरनी, से भी साहब लखता है।[9]

इस तरह उन्होंने हिन्दु और इस्लाम धर्मो के बीच धर्म के ठेकेदारों, बाहरी आडम्बरों के आधार पर भेदभाव फैलाने वालों की कड़ी आलोचना की और इस आलोचना के द्वारा उन्होंने बार-बार यह दिखाने का प्रयास किया कि दोनों की मुक्ति के लिए एक ही रास्ता है जो उनके अपने-अपने दर्शन के अनुसार एक ईश्वर एक अल्लाह है, जो तमाम पक्षों से निष्पक्ष दिखाई पड़ता है।

वर्ग-भेद, जाति-भेद, छुआछुत आदि कुप्रवृत्तियों के अतिरिक्त कबीर और कबीर पंथ ने सती प्रथा[10] और पर्दाप्रथा[11] की खुलकर आलोचना की एवं हिन्दु मुस्लिम समन्वयवादी प्रवृत्तियों को बढ़ावा दिया।[12]

कबीर पंथ में सरल जीवन पर विशेष जोर दिया जाता है। रहन -सहन, खान-पान की शुद्धता अनिवार्य है। हिंसा का त्याग धर्म का मूल है । सभी जीवों पर दया करना प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है। आपस में द्वेष को भुलाकर सामूहिक रूप से भक्ति करना संगठित जीवन का प्रतीक है। गुरू धनी धर्मदास जी की प्रमुख देन यह है कि जाति -पांति के आधार पर उन्होंने पंथ का निर्माण नहीं किया।

वर्तमान समय में भी सामाजिक सुधार के अंतर्गत कबीर पंथियों द्वारा बहुत से उल्लेखनीय कार्य किये जा रहे हैं। कबीर पंथी समाज के उत्थान के लिए भी सतत् प्रयत्नशील हैं। जैसे कुदुरमाल गुरूगद्दी में कबीर पंथियों द्वारा शिक्षा के विकास हेतु प्राइमरी स्कूल की स्थापना की गयी एवं राज्य शासन को 15 एकड़ भूमि शाला भवन के लिये दान की गई है।

सुख सागर और ज्ञान सागर नामक तालाब भी खुदवाये गए, तथा सभी धर्म,जाति और सम्प्रदाय के लोग इन तालाबों का बेहिचक उपयोग करते हैं।

इस प्रकार निःसंकोच कहा जा सकता है कि कबीरपंथ ने सामाजिक क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन का सूत्रपात किया है। छत्तीसगढ़ में पिछड़ी जातियों एवं शोषित जनता को सम्मानीय स्थान दिलाने के लिए इस पंथ ने अथक परिश्रम किया है।

कबीरपंथ ने एकता की प्रेरणा जगाकर जनमानस को जीवन मुक्ति का मार्ग दिखलाया है। अभाव में डुबे हुए समाज को कबीर पंथी संतों ने ज्ञान का दीपक दिखाकर उनके लिए मुक्ति का महल बनाने का प्रयास किया।

2. धार्मिक प्रभाव

जब -जब समाज में धर्म के विशेष रूप को अधिक महत्व देकर उसे विकृत किया गया, तब-तब धर्म के साधारण स्वरूप की पुनर्प्रतिष्ठा की गई है। प्रतिक्रिया रूप में उद्भूत धर्म के इन साधारण स्वरूपों में सहजाचरण,सहज साधना और सहजोपासना विधि पर सदैव ही ध्यान रखा गया है।[13]

कबीर की धार्मिक विचारधारा का उदय भी हिन्दु और इस्लाम धर्मो के पाखण्ड पूर्ण एवं विकृत रूप की प्रतिक्रिया के रूप में समझना चाहिए।[14] यही कारण है कि इसे विधि विधान प्रधान हिन्दू और इस्लाम धर्म के विरूद्ध सहज धर्म कहा गया है। कुछ लोग उसे मानव धर्म,निज धर्म या हित धर्म भी कहते हैं।

कबीर के समय हिन्दू धर्म का स्वरूप ज्ञान, भक्ति तथा कर्म से रहित हो चुका था। कबीर ने समाज एवं धर्म का यथार्थ रूप प्रस्तुत कर मानव को आत्मकल्याण की ओर प्रवृत्त किया। वे जीवन पर्यन्त आध्यात्मिक उपलब्धियों में संलग्न रहे। भारतीय क्षितिज पर उनके महान व्यक्तित्व को धार्मिक एवं सामाजिक परिवेश से संघर्ष करना पड़ा।

कबीर ने हिन्दूओं के तीर्थ,व्रत, मूर्तिपूजा तथा मुसलमानों के रोजे नमाज पर स्पष्ट प्रहार किया। उन्होंने कहा अन्धी परम्पराओं तथा जर्जर रूढ़ियों,दो पूर्ण नितियों के खिलाफ संघर्ष करने हेतु अकबर और सिकन्दर जैसे साम्राज्यवादियों के काल में मानव मात्र के सत्यपथ का राही,स्वतंत्रता का पुजारी समता का संस्थापक और न्याय का पक्षधर बनने हेतु मैं अकेला ही चला था।

कबीर तीर्थों में जाकर उसके दर्शन पूजन नहीं करते थे, वे हरि भक्ति के बिना सब निस्सार कहते थे।[15]

कबीर पंथ का आरंभ व विकास ठोस आधार पर हुआ। यह मानव कल्याणकारी धर्म सम्प्रदाय के रूप में विकसित हुआ। हिन्दू और मुसलमान दोनों ने कबीर द्वारा प्रसारित शिक्षा या सिद्धांत को एक सम्प्रदाय के रूप में स्वीकार किया।[16]

उन्होंने ऐसे धर्म सम्प्रदाय का आख्यान किया जो विश्वधर्म है जो देश काल निरपेक्ष्य है। वह धर्म सृष्टि का धर्म है, प्रकृति का धर्म है। जैसे आकाश का धर्म शब्द, वायु का धर्म स्पर्श, अग्नि का धर्म तेज, जल का धर्म स्वाद, पृथ्वी का धर्म सुगन्धि, उसी प्रकार मानव का धर्म प्रेम और सदाचार है, जिसमें किसी प्रकार का बंधन नहीं है, किसी प्रकार का अवरोध या संकोच नहीं। जीवन इतना सात्विक है कि उसे धर्म की संज्ञा दी जा सकती है। जो धर्म है वही जीवन है।[17] इससे मानव मात्र एक ही सत्ता की इकाई है, उसमें एक ही जीवन का आदर्श है, एक ही राष्ट्रीयता है और इसी दृष्टि से संत कबीर राष्ट्रीय एकता के सूत्रधार हैं।

कबीर ने सभी राष्ट्रीय धर्मों के अंधविश्वासों पाखण्डों एवं बाह्य आडंबरों का बहुत विरोध किया, परन्तु यह विरोध जड़तामूलक नहीं, पूर्ण बुद्धिवादी है। स्वर्ग नरक में भी उनको विश्वास नहीं था।कबीर के सहज धर्म में किसी प्रकार के बाह्याचारों को स्थान नहीं है।कबीर ने निवृति को बुरा नहीं माना अपितु बाह्य आडंबरों को बुरा माना । वस्त्र गेरूआ रंग में रंगा कर अथवा सिर के बाल छुटा कर सन्यासी बनने की अपेक्षा वे मन को रंगना अधिक श्रेयस्कर मानते थे। इसलिए उन्होंने ऐसे मध्यम मार्ग का उपदेश दिया,जिसमें भक्ति और मुक्ति दोनों हो। गृहस्थ आश्रम में रहते हुए भी निष्काम भक्ति भावना से आचरण करना उनके मध्यम मार्ग का मूल मंत्र है। क्योंकि वे मानते हैं कि एक गृही भी वैरागी हो सकता है। गृही और वैरागी का अंतर उनकी दृष्टि में बड़ा नाजुक है। विरले ही उसे समझ पाते हैं:—

"गावण ही मैं रोज है, रोवण ही मैं राग।
इक वैरागी ग्रिह में, इक गृही में वैराग।।"

धर्म के संबंध में कबीर ने अत्यंन्त महत्वपूर्ण विचार व्यक्त किये हैं। उन्होंने किसी धार्मिक विश्वास को इसलिये स्वीकार नहीं किया कि वह धर्म का अंग बन चुका है,अपितु

अंधविश्वासों,व्रत,अवतारोपासना, ब्राह्मणों के कर्मकाण्ड,तीर्थ आदि पर कस कर व्यंग्य किये। उन्होंने पहली बार धर्म को अकर्मण्यता की भूमि से हटाकर कर्मयोगी की भूमि पर ला खड़ा किया। कबीर ने पौराणिक हिन्दू मत के साथ-साथ मुल्लाओं और काजियों की रूढ़िवादि धार्मिक परम्परा का भी डटकर विरोध किया। वे भक्ति और बाहरी आडम्बरों का संबंध सूर्य और अंधकार सदृश्य मानते हैं जो एक साथ नहीं रह सकते।

आडम्बर प्रधान धर्म के विरोध में उन्होंने सहज धर्म को बहुमान दिया है। उनका सहज धर्म धर्माभासों की प्रतिक्रिया के रूप में उदय हुआ था।[19] उनका सहज धर्म आंतरिक शुद्धता पर आधारित है। इस धर्म में पूजा-पाठ की आवश्यकता नहीं। जिनका मन शुद्ध है,हृदय निष्कपट है, विचार पवित्र हैं,आचरण सात्विक है

"काम क्रोध तृष्णा जदै,ताहि मिले भगवान।"[20]

वहीं सच्चे अर्थ में धार्मिक हैं, क्योंकि—

"हरि न मिले बिन हिरदै सूध।"[21]

इनके विचारों में यदि इस प्रकार के आडम्बर समाप्त हो जाये तो समस्त मानव समाज का धर्म एक हो जाए। कबीर स्वानुभूति मूलक बात कहते हैं,वही बात जो जीवन की प्रयोगशाला में सत्य सिद्ध हो सके।[22]

कबीर साहब ने किसी प्रचलित धर्म व संप्रदाय के मूल सिद्धांतों का विरोध नहीं किया और न उनकी आलोचना तक की। वे निष्काम भक्ति का ही उपदेश देते हैं—

"जब लगि भगति सकामता तब लगि निष्फल सेवा।
कहै कबीर वे क्युं मिले निहकामी निज देव।।[23]

कबीर साहब ने समस्त धर्मो का सार लेकर जनता को धर्म का ऐसा रूप दिखाया जो सर्व ग्रहण करने योग्य एवं सुखकारी था। धर्म के इस सर्वजन सुलभ स्वरूप को प्रस्तुत करने में कबीर को पूर्व प्रस्थापित धार्मिक विचारधाराओं के आडम्बरों का खंडन करना पड़ा था। इस धार्मिक दोष दर्शन में कबीर पूर्ण निष्पक्ष रहे।[24] उन्होंने लिखा है—

"सीतलता सब जाणिये,समिता रहै समाई।
पर्ष छाड़ै निरपष रहै, सबदन दूष्या लाइ।।"

धार्मिक कुरितियाँ छत्तीसगढ़ के विकास में अवरोध उत्पन्न कर रहीं थीं। जनता धर्म एवं संप्रदाय के खेमों में बंटी हुई थी। अर्थहीन आडम्बरों,वैचारिक रूढ़ियों अंधविश्वासों पर साहस के साथ प्रहार करने की आवश्यक्ता थी। छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ के गुरूओं एवं संतों ने यह घोषणा की, कि धर्म की श्रेष्ठता किसी धर्म मत को मानने से नहीं बल्कि आचरण की शुद्धता से है। धर्माडम्बरों, अंधविश्वासों की निर्मम चक्की में पिस रही जनता की आत्मा को मुक्त कराने के लिए कबीर की तरह विद्रोही बनकर ललकारने का कार्य

यहां के पंथ सदस्यों ने किया।

छत्तीसगढ़ की पिछड़ी हुई जातियाँ विभिन्न देवी देवताओं को स्वीकार कर अनेक वर्गों में बंट गई थीं। कबीर पंथ के गुरूओं और संतों ने इसकी तीखी आलोचना की और ईश्वर का एकत्व बताकर निराकार की उपासना पर बल दिया। धर्म के नाम पर जो कट्टरता थी, उसे कबीर पंथ के गुरूओं ने दूर करने का प्रयास किया। परिणाम स्वरूप छत्तीसगढ़ की निम्न जातियों ने धर्म कट्टरता से मुक्ति पाने के लिए इस पंथ को स्वीकार किया। आरंभ में कबीर पंथ को ब्राह्मण संस्कृति का प्रतिरोध झेलना पड़ा, परन्तु पिछड़ी जातियों ने इसे भरपूर समर्थन दिया और स्वीकार भी किया।

इस प्रकार छत्तीसगढ़ में गुरू धनी धर्मदास ने सामाजिक क्षेत्र की भाँति धार्मिक क्षेत्र में यहाँ के निवासियों का पथ प्रदर्शन किया। इनके उत्तराधिकारी आज भी दामाखेड़ा से अपने ज्ञान की मशाल द्वारा अंधकार में पड़े हुए मानव समाज को सत्य के खोज की प्रेरणा दे रहे हैं।

संदभ-ग्रंथ-सूची

1. डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत,कबीर की विचारधारा, साहित्य निकेतन, द्वितीय संस्करण,संवत् 2014, पृ. 328.
2. प्रो. पुष्पपाल सिंह, कबीर ग्रंथावली,नई दिल्ली-6 अशोक प्रकाशन, 1969,पृ.47.
3. विवेक दास, कबीर साहित्य की प्रासंगिकता, विवेक प्रकाशन, 1978, पृ129.
4. डॉ. केदारनाथ द्विवेदी, कबीर और कबीर पंथ, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग,सन् 1965, पृ.133.
5. उपरोक्त, पृ.15.
6. उपरोक्त, पृ.154.
7. श्यामसुंदर दास, कबीर ग्रंथावली, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, संवत्1987, पृ. 36.
8. आचार्य गृन्धमुनि नाम साहब, सद्गुरू कबीर ज्ञान पयोनिधि, श्री सद्गुरू कबीर धर्मदास साहब वंशावली सभा दामाखेड़ा,2001, पृ.183.
9. पुष्पपाल सिंह, कबीर ग्रंथावली सटीक,पृ. 49.
10. एम.ए.मैकालिफ, दि सिक्ख रिलीजन, जिल्द6,1409, पृ. 163.
11. उपरोक्त पृ. 213-14.
12. ए.रशीद,सोसायटी एण्ड कल्चर इन मिडिल इंडिया, कलकत्ता,1969 पृ. 248.
13. डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत, कबीर की विचारधारा, पृ. 318.

14. उपरोक्त, पृ. 318.
15. डॉ. प्रहल्लाद मौर्य, कबीर का सामाजिक दर्शन, प्रकाशक एवं सन् अप्राप्त,पृ. 117.
16. विष्णुराम साहु, छत्तीसगढ़ की पिछड़ी जातियों के उत्थान में कबीर पंथ का योगदान(लघु शोध प्रबंध) पृ. 106.
17. डॉ. रामकुमार वर्मा, कबीर एक अनुशीलन, साहित्य भवन इलाहाबाद, 1998, पृ. 12.
18. श्यामसुदर दास, कबीर ग्रंथावली, पद 20, साखी 35,पृ. 46.
19. डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत, कबीर की विचारधारा, पृ. 320.
20. कबीर ग्रंथ पृ.1.
21. उपरोक्त पृ. 214.
22. डॉ. के. एन. द्विवेदी, कबीर और कबीर पंथ, पृ 154.
23. डॉ. विनय मोहन शर्मा,कबीर कुछ विचार, अनाहत श्री कबीर स्मृति ग्रंथ, वाराणसी पृ. 62.
24. प्रे.पुष्पपाल सिंह, कबीर साखी समीक्षा, नई दिल्ली 1967 पृ. 74.

कार्यालय नगरपालिका मण्डल

श्रीडूँगरगढ़ (बीकानेर)

अपील

शहर को स्वच्छ, सुन्दर व हरा-भरा रखे जाने के संबंध में नगरपालिका मण्डल, श्रीडूँगरगढ़ कटिबद्ध है, अतः कृपया -

१. कस्बे की समुचित सफाई व्यवस्था हेतु सड़कों /फुटपाथों /खुली जगह /खुली नालियों में कचरा न डालें।
२. कस्बे में आवारा पशुओं के स्वच्छंद विचरण करने से आम जन को परेशानी होती है, आवागमन में बाधा उत्पन्न होने के साथ-साथ दुर्घटनाएं घटित होने की संभावना बनी रहती है। अतः अपने पालतू पशुओं को बांध कर रखें।
३. कस्बे का सौंदर्यकरण प्रकाश व्यवस्था से परिलक्षित होता है। प्रकाश व्यवस्था को और अधिक व्यवस्थित करने के लिए मण्डल प्रयासरत है। आपका भी सहयोग अपेक्षित है।
४. पालिका की भूमि/फुटपाथ पर अतिक्रमण न करें और न किसी और को करने दें।
५. मुख्य बाजार में सफाई कर्मियों द्वारा सफाई करने के बाद दुकान/प्रतिष्ठान का कचरा आम सड़क पर न डालें।
६. पालिका की अनुमति के बिना सड़क को क्षतिग्रस्त न करें (यथा पानी कनेक्शन, घड़ोई निर्माण)।
७. अनुमति लेकर ही भवन निर्माण करें व निर्माण के समय बरसात के जल संग्रहण हेतु कुंड का निर्माण करावें।
८. जन्म-मृत्यु की सूचना पालिका कार्यालय में तुरन्त दर्ज करवाएं।
९. **पोलिथीन की थैलियों के प्रयोग पर पूर्णतया प्रतिबंध है कृपया कपड़े व कागज की थैलियां उपयोग में लावें।**

किशनाराम सेंगवा	**रामेश्वरलाल पारीक**
अधिशाषी अधिकारी	अध्यक्ष
नगरपालिका मण्डल, श्रीडूँगरगढ़	नगरपालिका मण्डल,श्रीडूँगरगढ़

श्याम महर्षि सचिव-मरुभूमि शोध संस्थान, श्रीडूँगरगढ़ के लिए मुद्रित एवं प्रकाशित।

मुद्रक : महर्षि प्रिंटर्स, श्रीडूँगरगढ़ (बीकानेर) राज.

ISSN : 2278-4632

ख्यात

इतिहास, कला एवं संस्कृति की शोध पत्रिका

छत्तीसगढ़ विशेषांक

सम्पादक

डॉ. भँवर भादानी

मरुभूमि शोध संस्थान

श्रीडूँगरगढ़ (बीकानेर) राजस्थान

छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ का उद्‌भव एवं विकास

● राधेश्याम पटेल

सम्पूर्ण भारतवर्ष की सांस्कृतिक चेतना में अध्यात्म का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है और यहीं से धार्मिकता का प्रादुर्भाव होता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से परम्परावादी क्षेत्र छत्तीसगढ़ भी प्रारम्भ से ही धार्मिक गतिविधियों का केन्द्र रहा व यहां के जीवन में आध्यात्मिकता के भाव छाए रहे। वास्तव में छत्तीसगढ़ अंचल की धार्मिक धारा का समारम्भ कबीर प्रभावित आंचलिक संप्रदायों एवं पंथों के माध्यम से हुआ। छत्तीसगढ़ अविकसित और अशिक्षित क्षेत्र जहां सवर्ण हिन्दू अपने आपको उच्च मानते थे। इसलिए प्रतिक्रिया स्वरूप निम्नवर्गीय लोगों का उठ खड़ा होना स्वाभाविक था।[1] अतः कहा जा सकता है कि छत्तीसगढ़ में कबीरपंथ और सतनामीपंथ का विकास विद्यमान धार्मिक व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह का प्रतीक था। इन दोनों पंथों का उद्‌देश्य धार्मिक सुधार के साथ-साथ सामाजिक सुधार लाना था।[2]

विद्वानों के अनुसार समस्त छत्तीसगढ़ के कबीरपंथियों का केन्द्र सर्व प्रथम इसी क्षेत्र के कवर्धा[3], दामाखेड़ा और कुदुरमाल नामक स्थानों में स्थापित हुआ। आज भी भारत भर के कबीर पंथी इन स्थानों पर श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए आते हैं।

छत्तीसगढ़ में कबीरपंथ को स्थापित करने का श्रेय कबीर साहब के शिष्य धर्मदासजी को है। वे कहते थे कि कबीर ने उन्हें 'झीना दरश' दिखाया था।[4]

छत्तीसगढ़ में कबीरपंथ का विस्तृत वर्णन करना ही हमारा मूल प्रयोजन है।

मध्य प्रदेश का छत्तीसगढ़ कबीर पंथ का मूल केन्द्र रहा है।[5] छत्तीसगढ़ी शाखा के प्रवर्तक धनी धर्मदासजी माने जाते हैं। कबीर साहब ने अपने सतपंथ के प्रचार और प्रसार करने का भार धर्मदासजी साहेब और उनके बयालिस वंशों को सौंपा। इस संबंध में शब्दावली की निम्न साखी प्रचलित है : -

'चार गुरु संसार में धर्मदस बड़ अंश।
मुक्त राज्य लिख दिया, अटल बयालिश वंश।[6]

सर्व प्रथम धर्मदासजी साहब के द्वितीय पुत्र आचार्य मुक्तामणी नाम साहब (चूड़ामणी साहब) छत्तीसगढ़ के कुदुरमाल नामक स्थान के गुरु गद्दी की स्थापना की और वंश का प्रचार एवं प्रसार किया। तत्पश्चात् उनके पुत्र आचार्य सुदर्शन नाम साहब ने अपने ननिहाल रतनपुर में गद्दी स्थापित की, इनका पुत्र आचार्य कुलपत नाम साहब वापस कुदुरमाल आकर वहां की गद्दी के उत्तराधिकारी बने।[7] इनके पुत्र आचार्य प्रमोद गुरू ने बालापीर के कारण वंश मंडला में अपनी गुरु गद्दी स्थापित की। इनके पुत्र केवल नाम साहब मंडला से धमधा आ गये। आकर 25 वर्षों तक पंथ का प्रचार एवं प्रसार करने के बाद सत् लोक गमन किए, इनके पुत्र आचार्य अमोल नाम साहब ने पुनः मंडला आकर वहां की गद्दी का संचालन किया।[8]

इनके पुत्र आचार्य सूरत सनेही साहब सिंघोड़ी आ गये और वहां वंश गद्दी की स्थापना की, इनके दासी पुत्र आचार्य हक्क नाम साहब कवर्धा आकर वहां के सहयोग से वहां गद्दी की स्थापना की। इनके सतलोक गमन के पश्चात् इनके पुत्र आचार्य पाक नाम साहब ने गद्दी का कार्यभार संभाला। आचार्य प्रकट नाम साहब के पश्चात् आचार्य धीरज नाम साहब ने कवर्धा की गद्दी संभाली।

इनके बाद आचार्य उग्रनाम साहब ने यहां की गद्दी संभाली परन्तु किन्हीं कारणों से उन्होंने अपनी गद्दी दामाखेड़ा में स्थानांतरित कर ली, इनके पुत्र आचार्य दयाराम ने इनके पश्चात् वहां की गद्दी संभाली, इनके पश्चात् वंश में थोड़ी खलबली मची क्योंकि पं. दयाराम साहब के कोई उत्तराधिकारी नहीं हुए तथा खरसिया में नादवंश की परम्परा शुरू हुई एवं दत्तक पुत्र आचार्य चतुरभुज दासजी, आचार्य गृन्धमुनि नाम साहब के नाम से दामाखेड़ा में गद्दी के उत्तराधिकारी बने। इसके पश्चात् आचार्य प्रकाशमुनि नाम साहब ने दामाखेड़ा की गद्दी संभाली जो वर्तमान में अभी भी वंश का प्रचार प्रचार कर रहे हैं। इसी प्रकार से खरसिया गद्दी

का कार्यभार आचार्य उदितमुनि नाम साहब ने संभाला।[9]

इसके अतिरिक्त कबीर पंथ में अनेक शाखाओं का उद्भव हो गया। कई शाखाएं अपने उद्भव काल से ही स्वतंत्र हैं और कुछ शाखाएं इन स्वतंत्र प्रमुख शाखाओं में से ही किसी न किसी से सम्बद्ध थी, किन्तु अब इन्होंने उनसे (प्रमुख शाखाओं) संबंध विच्छेद कर अपने को स्वतंत्र घोषित कर लिया है।[10]

धनी धर्मदासजी के विचार छत्तीसगढ़ के कबीर पंथियों के लिए प्रेरणाप्रद है। उनकी साधना, परमात्मा, जीव और माया संबंधी विचार आज भी ग्राह्य हैं। एक ब्रम्ह, गुरु सेवा, इन्द्रिय निग्रह, निष्काम भक्ति, सगुण-निर्गुण का समन्वय रूप, सार शब्द का सुमिरन और सर्व धर्मकी समानता सहज ही कबीर पंथ को एक सुदृढ़ नींव प्रदान करती है। सबके लिए भक्ति और मुक्ति का संदेश देने वाले इस लोक नायक को कौन भूल सकता है। कबीर पंथ को उनका प्रदेय सदा याद रहेगा। इस संबंध में डॉ. डी. लाजरस का उद्धरण है। उनके अनुसार - 'छत्तीसगढ़ के कबीर पंथ का आरम्भ और विकास ठोस आधार पर हुआ है। यह मानव कल्याणकारी धर्म के रूप में विकसित हुआ है। यह अंधानुकरण के त्याग का संदेश देता है। इसमें व्यापकता और उदारता है। इस पंथ में सांप्रदायिकता की भावना के ऊपर उठकर सरल साधना की प्रतिष्ठा की गई है और यथार्थ जीवन के लिए मार्ग प्रशस्त किया गया है। इस पंथ में गुरुओं को विशिष्ठ स्थान प्रदान किया गया हैं। क्योंकि जीवन की सम्पन्नता एवं साधना के मार्ग को सदैव अलोकित करता है।[11] हिन्दी साहित्य की दृष्टि से समीक्षा करते हुए डॉ. रामदास शर्मा ने लिखा है - हिन्दी साहित्य में कबीर को यदि निर्गुण काव्य धारा का अग्रदूत कहा जाता है तो धर्मदासजी को छत्तीसगढ़ का कबीर कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।'

निश्चित ही धर्मदासजी छत्तीसगढ़ शाखा के प्रणेता थे। उनका छत्तीसगढ़ी शाखा एवं चौका गीतों पर निर्दिष्ट कार्य अद्वितीय है। उन्होंने ही कबीर साहब के उपदेशों से प्रभावित होकर जनमानस को उनकी संस्कृति और मानसिकता के अनुरूप भक्ति और धर्म का स्वरूप प्रदान किया है और छत्तीसगढ़ के सुदूर अंचल में निवास कर रहे कबीर पंथियों के आशा और विश्वास का केन्द्र दामाखेड़ा आज भी जनमानस में नयी चेतना का श्रीगणेश कर रहा है।

इस प्रकार भले ही कुछ समय के लिए छत्तीसगढ़ कबीर का कार्य क्षेत्र रहा तथा उसी समय कबीर के हजारों भक्त हुए किन्तु वास्तविक रूप से छत्तीसगढ़ में

कबीर पंथ के जन्मदाता एवं प्रचारक धनी धर्मदासजी ही हैं, तथा आज छत्तीसगढ़ में लाखों की संख्या में कबीरपंथी निवास करते हैं।

कबीर पंथ के प्रमुख केन्द्र (गद्दियां) : -

छत्तीसगढ़ कबीरपंथी चेतना का गढ़ रहा है। इस अंचल में कबीर पंथी आचार्यों ने अनेक गद्दियां स्थापित की हैं। धर्मदासजी के यहां चूरामणि नाम साहब का जन्म होने के पश्चात् छत्तीसगढ़ अंचल में वंश परम्परा के अन्तर्गत वंश की गद्दी आ गयी थी।[12] इसी वंश परम्परा में कबीर पंथ की गद्दियों के अनेक आचार्य हुए हैं। कबीर पंथ की प्रमुख गद्दियां निम्न हैं : -

1. कुदुरमाल -

कुदुरमाल को कबीरपंथ का प्रवेश द्वार कहें तो कोई अतिश्योक्ति न होगी, ज्ञानोपदेश की प्रथम सास्वत् किरण कुदुरमाल से ही उद्धरित हुई थी। कुदुरमाल चांपा जिला मुख्यालय से 18 कि.मी.उत्तर दिशा में स्थित है। यहां कबीर पंथ के प्रधानाचार्य मुक्तामणि नाम साहब की समाधि है। वे बांधवगढ़ से चलकर सोहागपुर, अमरकंटक, रतनपुर होते हुए हसदो नदी के किनारे कोरबा जमींदारी में पहुंचे और कुदुरमाल में आचार्य गद्दी की स्थापना की।[13] इसीलिए कबीरपंथ का मूल स्थान छत्तीसगढ़ में कुदुरमाल को माना जाता है।[14]

धर्मस्थान कुदुरमाल में एक लम्बा चौड़ा कबीर आश्रम है, जिसमें कई कमरे बने हुए हैं। इसी आश्रम के आंगन में एक कबीर मन्दिर है। कबीर आश्रम से 100 गज की दूरी पर एक भवन है। भवन के सामने मुक्तामणि नाम साहब, कुलपत नाम साहेब एवं अली साहेब की समाधियां बनी हुई है। यहां सुप्रसिद्ध तीर्थ बावली और नीम वृक्ष है।

यहां प्रतिवर्ष माघ शुक्ल दशमी से पूर्णिमा तक उत्सव का आयोजन किया जाता है, जिसमें विभिन्न स्थानों से संत आचार्य व महंत भाग लेते हैं और भाषण, प्रवचन आदि होता है।[15]

इस प्रकार समर्थ धनी मुक्तामणि नाम साहब द्वारा निर्दिष्ट कुदुरमाल गद्दी धर्म का प्रचार-प्रसार करते हुए वर्तमान में भी सुव्यवस्थित है।

2. दामाखेड़ा गद्दी -

छत्तीसगढ़ में कई धार्मिक स्थल हैं। इसी छत्तीसगढ़ में एक पुण्यधाम दामाखेड़ा है, जो पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। रायपुर-बिलासपुर मार्ग में रायपुर से

लगभग 54 कि.मी. दूर यह ग्राम स्थित है। प्रारम्भ में ही एक विशाल तिमंजिला मकान है, जिसके दायीं ओर ग्राम की मुख्य सड़क है। लगभग साढे तीन हजार आबादी वाला दामाखेड़ा देश-विदेश में लाखों कबीर पंथियों का धर्म नगर है।[16]

दामाखेड़ा वंश गद्दी की स्थापना बारहवें गुरु उग्रनाम साहब ने सन् 1953 में की थी।[17] एवं इनके पुत्र दयानाम साहब की निःसंतान मृत्यु हो जाने से वंश गद्दी में एक बार पुनः हलचल मच गई व विवाद होने लगा, तब बड़ी माता साहिबा श्रीमती कलाप देवी ने आठवें गुरु हम्क नाम साहब के वंशज को 1 दिसम्बर 1973 में गोद लिया तथा वंश परम्परानुसार उनका नाम गद्दी के लिए गृन्ध मुनि नाम साहब प्रस्तावित हुआ। इनके समय में कबीरपंथ अपने उन्नति के चरम पर पहुंच गया था। इनके पश्चात् दामाखेड़ा की गद्दी का कार्यभार आचार्य श्रीप्रकाशमुनि नाम साहब ने संभाला तथा वर्तमान में वंशगद्दी का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं।

कबीरपंथ के इस केन्द्र में प्रतिवर्ष माघ शुक्ल दशमी से पूर्णिमा तक संत समागम महामेला का आयोजन होता है व भारत के सभी प्रान्तों से अनेकानेक पथावलंबी यहां आते हैं।

यहां अनेक धर्मशालाएं हैं, अतिथि गृह हैं। इनके सत्यनाम प्रकाश भवन, दयाधाम, संत भदईराम का सत्संग भवन, साधु कचहरी आदि प्रमुख हैं।

दामाखेड़ा में समाधि मन्दिर है, जिसके भीतर माता साहिबा, श्रीगुरु साहेब, छोटी माता, मुक्तामणि नाम साहब, दयाराम साहेब की समाधियां बनी हुई है।

साहित्य निर्माण और प्रचार की दृष्टि से यह शाखा अन्य शाखाओं की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण है। इनकी हस्तलिखित कबीरपंथी रचनाएं मठ में हैं। 'वंश प्रताप', 'मणिमाला' नामक मासिक पत्रिका भी यहां से निकलती है।[18] जिससे कबीर पंथी विचारों का सुदूर प्रचार संभव हो सका है।

3 धमधा -

यह स्थान दुर्ग व बेमेतरा के मध्य सड़क के किनारे स्थित है। प्रमोद गुरू के बाद के आचार्य केवलनाम साहब का मन मंडला में न लगने से वे धमधा चले आये तथा यहीं पर उन्होने कबीरमठ का निर्माण करवाया। अमोल नाम साहब का प्राकट्य स्थल यही है। गुरू स्वामी एवं इन्द्र स्वामी यहां के कार्यों का संचालन कर रहे हैं। इस मठ का विशेष महत्त्व नहीं है। डॉ. विनय कुमार पाठक ने अपने शोध ग्रंथ में धमधा का अर्थ धर्म धाम से लिया है।[19]

4. खरसिया गद्दी –

हावड़ा-मुम्बई रेलमार्ग पर खरसिया का क्षेत्र स्थित है। खरसिया गद्दी के संस्थापक महंत श्रीकाशीदासजी थे। कबीर पंथ की इस गद्दी की स्थापना बड़ी विकट परिस्थितियों में हुई। पूर्व उल्लेखनीय है कि आचार्य दयारामजी की मृत्योपरांत उत्तराधिकारी की समस्या उत्पन्न हुई। कबीर पंथ के भेष पंथ कमेटी ने त्यागी संतों को ही भविष्य में आचार्य पद पर आसीन करने का क्रांतिकारी निर्णय लिया। फलस्वरूप बहुमत के आधार पर माउसानिया के श्री पंचमदास को चुना गया किन्तु वे माऊसानिया छोड़ने के इच्छुक नहीं थे। अतः काशीदासजी को भेष पंथ कमेटी ने स्वीकार किया।[20] काशीदासजी वंश गद्दी के आचार्य नहीं, बल्कि आचार्य के अभाव में मठ की ओर से मठ के प्रबंधक चुने गये थे। अतः कबीर कौंसिल का निर्माण होने के बाद चांपा में कबीर पंथियों की यह सभा हुई जिसमें प्रस्ताव रखा गया कि कबीर कौंसिल को समाप्त कर दिया जाए एवं किसी योग्य व्यक्ति को वंशाचार्य मानकर उसे निरंकुश छोड़ दिया जाए। अनेक कबीर पंथियों ने इसका विरोध किया, किन्तु अंततः खरसिया में नादवंश की स्थापना हुई।[21] कबीर पंथ की खरसिया शाखा स्वतंत्र गद्दी है जो वंशाचार्यों के नाम से स्वतंत्र गद्दी चला रही है।

खरसिया गद्दी की अधिकतम धार्मिक मान्यताएं अपने मूल केन्द्र वंशगद्दी दामाखेड़ा जैसा ही है। यह गद्दी वंश गद्दी के सद्ग्रंथों पर ही पूर्ण रूप से निर्भर करती है। पंथ के प्रचार एवं प्रसार के लिए यह गद्दी काफी प्रयास कर रही है। खरसिया गद्दी से संबंधित मठ देश में अनेक भागों में स्थित है। यहां ज्येष्ठ पूर्णिमा को हर साल विशाल मेला लगता है। वर्तमान में यह गद्दी छत्तीसगढ़ी गद्दी से अपना नाता तोड़ चुकी है तथा स्वतंत्र गद्दी है।

5. कवर्धा गद्दी –

कबीर धाम (कवर्धा) का छत्तीसगढ़ अंचल में विभिन्न दृष्टिकोणों से महत्त्व है। सुरतनेही नाम साहेब के निधन के पश्चात् महन्त सेवादास तथा हक्क नाम का गद्दी को लेकर विवाद हुआ, परिणामस्वरूप हक्कनाम साहेब ने सिंघोड़ी त्याग दिया व पंथ प्रचार के उद्देश्य से नागपुर, डोंगरगढ़, राजनांदगांव, धमधा होते हुए कवर्धा पहुंचे एवं यहां के राजा उजियार सिंह की भक्ति भावना से प्रभावित होकर हम्कनाम साहब ने वहां अपनी गद्दी स्थापित की। संवत् 1890 में हक्कनाम साहब के सतलोक गमन के पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र पाक नाम साहेब गद्दी पर

आसीन हुए। इन्होने 22 वर्ष तक गद्दी का संचालन किया व कबीरपंथ के विस्तार हेतु पंथ की नियमावली तैयार की एवं सम्मेलनों का आयोजन किया।

संवत् 1912 में पाक नाम साहब के सतलोक गमन के पश्चात् प्रकट नाम साहब गद्दी के उत्तराधिकारी बने। इनके कार्यकाल में भारत के अलावा अफ्रीका, मॉरीशश, फिलीपाइन द्वीप समूह, त्रिनिदाद आदि देशों में कबीर पंथ का प्रचार हुआ एवं मठ स्थापित हुए।[22]

प्रकटनाम साहेब के दो पुत्र धीरजनाम साहेब व राजानाम साहेब हुए। धीरजनाम साहेब की मृत्यु अल्पायु में हो जाने के कारण द्वितीय पुत्र को ही धीरजनाम साहेब कहा गया। इनके तीन पुत्र हुए। प्रथम दो पुत्रों की अल्पायु में ही मृत्यु हो गई। तृतीय पुत्र मुकुन्ददास का जन्म संवत् 1928 में एक दासी कन्या से हुआ। मुकुन्ददास ही आगे चलकर उग्रनाम साहेब कहलाए। किन्तु दासी पुत्र होने के कारण धीरजनाम साहेब के भतीजे व उग्रनाम साहेब के मध्य मुम्बई हाईकोर्ट में मुकदमा चला व धीरज नाम साहेब कवर्धा के जायज उत्तराधिकारी बने एवं उग्रनाम साहेब ने कवर्धा त्यागकर दामाखेड़ा में धर्म गद्दी का स्थानान्तरण कर लिया।

छत्तीसगढ़ में कबीरपंथ की दृष्टि से कवर्धा को इसलिए भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है, क्योंकि चार प्रमुख आचार्य हक्कनाम, पाकनाम, प्रगटनाम तथा धीरजनाम साहेब यहीं हुए।

कवर्धा में प्रतिवर्ष बसंत पंचमी से पूर्णिमा तक संत समागम समारोह तथा कबीर पंथियों का मेला लगता है।

6. रतनपुर गद्दी –

ऐतिहासिक विरासत को समेटे हुए रतनपुर आज भी छत्तीसगढ़ का गौरव स्थल है। अनेक राजाओं के जन्म स्थल होने के साथ ही यह स्थल देवी-देवताओं की मूर्तियों के लिए प्रसिद्ध है। 'रतनपुर हैहयवंशी राजा रत्नसेन की नगरी है।[23] मोरध्वज ताम्रध्वज वाली बहुचर्चित कथा का स्थान यही रतनपुर है।[24]

बिलासपुर जिले में स्थित यह नगरी कबीर पंथियों के लिए भी दर्शनीय स्थल है। बिलासपुर से 25 किलोमीटर उत्तर पूर्व की ओर रतनपुर कलकत्ता मार्ग पर है। 'कबीरपंथ के उद्घोषक धर्मदास ने रतनपुर स्थित गद्दी का दायित्व मुक्तामणि नाम साहेब को सौंप दिया था। रतनपुर के करेहा पारा में सुदर्शन नाम साहब का मठ बना हुआ है। यहां कबीर चरण पादुका में मुक्तामणि साहब अपने हाथों से धूप दीप

किया करते थे। आरती विसर्जन के बाद अपने आश्रमों को जाते थे।[25]

मुक्तामणि नाम साहब के सतलोक गमन के पश्चात् 10 वर्ष की अवस्था में उनके उत्तराधिकारी पुत्र सुदर्शन नाम साहब ने गद्दी संभाली। मुक्तामणी नाम साहब 70 वर्ष की अवस्था में ब्रह्म में लीन हो गए।[26]

इस मठ का महत्त्व इसलिए अधिक है कि यहां मुक्तामणि एवं सुदर्शन नाम साहब का कार्य स्थल रहा है। इसके पश्चात् इस गद्दी का संचालन महन्त रामचरण दासजी के द्वारा हो रहा है, जिनकी आयु लगभग 90 वर्ष की थी। महन्त तुलसीदासजी भावी उत्तराधिकारी हैं, जो श्रेष्ठ भजन गायक एवं खंझेरी वादक हैं। वर्तमान में इस मठ से कोई प्रकाशित एवं अप्रकाशित ग्रंथ नहीं है। यहां लगभग १६ एकड़ जमीन है, जिससे मठ की व्यवस्था की जाती है। वर्तमान समय में यह स्थान अपने को खरसिया गद्दी से संबंधित मानता है, किन्तु उसका पूर्ण रूप से अलग होना स्वीकार नहीं किया जा सकता।

7. पारख गद्दी बुरहानपुर –

कबीर पंथ के इतिहास में इस शाखा का विशिष्ट स्थान है। इसके प्रवर्तक पूरन साहब माने जाते हैं। इन्होने महंत सुखलाल साहब से दीक्षा ली एवं उनके सतलोक वास के पश्चात् उनके स्थान पर बुरहानपुर कबीर मन्दिर में महंत पद पर पूरन साहब को ही नियुक्त किया गया।[27]

कहा जाता है कि शीघ्र ही उहोने कबीर वंशाचार्य वंश प्रताप आचार्य पाकनाम साहब से पंजा प्रमाण लिया था, किन्तु यह गद्दी कबीर पंथ की किस शाखा से संबंध है, यह विवादास्पद है। डॉ. एफ़ ई. की ने इस शाखा को काशी चौरा से सम्बद्ध बतलाया है।[28]
जबकि इस शाखा के कबीर पंथी महात्माओं के अनुसार यह शाखा किसी अन्य शाखा से सम्बद्ध न होकर पूर्णतः स्वतंत्र है। यदि निरपेक्ष रूप से विचार किया जाए तो कहा जा सकता है कि इस शाखा का संबंध पहले छत्तीसगढ़ी शाखा से रहा होगा।[29]

पूरन साहब ने 'निर्णयसार', 'वैराग्य शतक' तथा 'बीजक टीका' आदि ग्रंथ लिखे। बीजक टीका समाप्ति के तीसरे दिन अगहन कृष्ण 3 संवत् 1894 को पूरन साहब ने वहीं शरीर छोड़ दिया।[30] यहां उनकी समाधि है। बाद में इस मठ का नाम बदलकर 'कबीर निर्णय मन्दिर' बुरहानपुर रख दिया गया।

यहां की शाखाएं सिंघखेड़ा, राजनांदगांव, चिंवरी, ठेठा, डोमा, सिवनी, भानपुरी, अटंग, महासमुंद, गतावार, अवाला, नेपाल इत्यादि अनेक स्थानों पर है।[31]

इस शाखा वालों की मान्यता है कि कबीर साहब का जन्म सांसारिक नियमानुसार हुआ था। इस शाखा से कम से कम 200 छोटे-मोटे ग्रंथों का प्रकाशन हो चुका है। यहां के संत भक्त अपने नाम के आगे या पीछे 'पारखी' शब्द अवश्य जोड़ते हैं। इस शाखा की विचारधारा जैन एवं बौद्ध धर्म की तरह जीववादी है तथा कबीरपंथ के वास्तविक सिद्धान्त से पृथक होती दिखाई दे रही है।[32]

9. नादिया गद्दी –

कबीर पंथ की नादिया शाखा के संस्थापक महन्त सेवादासजी थे। सेवादासजी वंश गुरु सुरतनेही नाम साहेब के पंजाधारी महन्त थे। आपकी सेवा और गुरुभक्ति से प्रभावित होकर श्री सुरतनेही नाम साहेब ने आपको सिंघाही का पुजारी महन्त नियुक्त किया था। संवत् 1854 में सुरतसनेही नाम साहब का सतलोक गमन हुआ।[33] सुरतसनेही के वैध संतान न होने के कारण उनके दासी पुत्र हक्कनाम साहेब को वंश का उत्तराधिकारी घोषित किया गया।[34] किन्तु सेवादास ने इसका प्रबल विरोध किया, किन्तु असफल रहे।

अपने नाम से अलग गद्दी की स्थापना हेतु सेवादासजी भ्रमण करते-करते राजनांदगांव के नादिया ग्राम पहुंचे एवं वहां मालगुजार को नादिया ग्राम उन्हें चढ़ा दिया। संवत् 1888 में महन्त सेवादास ने कबीर पंथ की एक अलग शाखा की स्थापना की।[35]

नादिया गद्दी की धार्मिक मान्यताएं वंशगद्दी से पर्याप्त मिलती-जुलती है। लेकिन चौका पद्धति भिन्न है। आचार्य पद को लेकर श्रीगंगा साहेब और महेश साहेब के मध्य संघर्ष हुआ। नादिया गांव की जनता ने दोनों को मठ से निष्कासित कर मठ से संबंधित समस्त भूमि पर कब्जा कर लिया है। बहुचर्चित विवादास्पद कबीर मठ नादिया की करीबन 200 एकड़ भूमि प्रदेश सरकार ने अधिग्रहित कर गरीब हरिजन आदिवासियों को आवंटित कर दी थी, जिसे लेकर खूनी संघर्ष भी हुए थे।[36]

9. कबीर मन्दिर हरदी –

जांजगीर-चांपा जिले में नैला स्टेशन से थोड़ी दूर हरदी नामक ग्राम है, जहां

कबीर मन्दिर है। संवत् 1969 में हरदी के एक प्रभावशाली व्यक्ति, महन्त मुकुंदानंदजी शर्मा ने इसका निर्माण करवाया था। उन्होने श्रीसद्गुरु महा महिमा नामक ग्रंथ की रचना की थी। इस ग्रंथ की समाप्ति के लगभग दो वर्ष पश्चात् संवत् 2002 में उनका निधन हो गया। वर्तमान समय में उन्हीं के पुत्र नित्यानंदजी ने महंत का कार्यभार ग्रहण किया।[37] जिन्होने अपने पिता द्वारा लिखित उक्त ग्रंथ का प्रकाशन कराया है।

10. बमनी –

यह ग्राम कवर्धा रो कुछ मील दूरी पर स्थित है। धीरजनाम की मृत्यु के अनन्तर जब उग्रनाम साहब दामाखेड़ा के कबीर पंथी मठ के आचार्य बनाए गए, तब धीरजनाम के प्रतिनिधियों ने कवर्धा से थोड़ी दूर बमनी में अपनी गद्दी स्थापित कर ली।[38] इस शाखा का कोई विशेष महत्त्व नहीं है। इसके अनुयायियों की संख्या भी अल्प है।

11. चांपा –

चांपा बिलासपुर से 53 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। चांपा का कबीर मन्दिर 'बरारी आश्रम' के नाम से जाना जाता है। इसकी प्रतिस्थापना का श्रेय श्रीसुकृतदास साहब बरारी को है। इन्होने सत्कबीर पुराण का प्रणयन किया। इस ग्रंथ में उन्होने कबीर पंथी विचारों को संकलित किया है। महन्तजी के बैंगलोर प्रस्थान के बाद चांपा के बरारी आश्रम का दायित्व उनके पुत्र ललितादासजी पर आ गया है। कबीर पंथी विचारधाराओं को वर्तमान में उन्हीं के द्वारा पल्लवित किया जा रहा है। इस केन्द्र की वंश गद्दी दामाखेड़ा से सम्बद्ध नहीं है।

इस प्रकार कबीर पंथी गद्दियों, समाधि स्थलों, कबीर पंथी अनुयायियों का सम्यक अनुशीलन और विश्लेषण करने से यह सिद्ध होता है कि छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ के सिद्धान्तों का व्यापक प्रचार एवं प्रसार था। धर्मदास ने अपने कार्यकाल में अनेक गद्दियां स्थापित की थीं, जो देश तथा विदेश में निवास करने वाले कबीर पंथियों के लिए आस्था एवं श्रद्धा का केन्द्र रही है।

वस्तुतः छत्तीसगढ़ की इन वंश गद्दियों द्वारा कबीर के सार्वभौम सिद्धांतों का व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ। साथ ही मानव धर्म, प्रेम, सत्य, अहिंसा को व्यापकता मिली। कबीर पंथियों ने छत्तीसगढ़ में सम्प्रदायवाद के खिलाफ समरसता के सिद्धान्त का प्रचार कर मानवीय जीवन मूल्यों में नई चेतना भर दी है।

संदर्भ-सूची

1. **रायपुर गजेटियर**, संवत् 1909, पृ. 78
2. वही, पृ. 81
3. कालिका प्रसाद दीक्षित, म.प्र.के हिन्दी साहित्य का इतिहास, कुसुमाकर शुक्ल अभिनंदन ग्रंथ, सन् अप्राप्य, पृ.77
4. अनुराग सागर, संवत् 1971, पृ. 84-85
5. केदारनाथ द्विवेदी, **कबीर और कबीर पंथ**, सन् 1965 पृ. 169.
6. **शब्दावली की साक्षी**, हस्तलिखित
7. व्यक्तिगत सर्वेक्षण
8. केदारनाथ द्विवेदी, **कबीर और कबीरपंथ** पृ. 334-44
9. व्यक्तिगत सर्वेक्षण
10. राजेन्द्रप्रसाद, **कबीरपंथ का उद्भव** एवं प्रसाद सन् 1987, पृ. 10
11. डी. लाजरस, **छत्तीसगढ़ में उपलब्ध कबीर पंथी साहित्य का अनुशीलन**, सन् 1982, पृ.35
12. राजेन्द्र प्रसाद, **कबीरपंथ का उद्भव एवं प्रसार** पृ. 14
13. महंत मुकुन्दानंद शर्मा, **श्रीसद्गुरु कबीर महा महिमा**, संवत् 2002 पृ. 195
14. स्नावी ब्रह्मलीन मुनि, **सद्गुरु श्रीकबीर चरितम्** संवत् 2016 पृ. 623
15. सुशीला पाण्डेय, **छत्तीसगढ़ में रचित कबीर पंथी साहित्य का सांस्कृतिक अनुशीलन** सन्1992 पृ.121
16. **धर्मयुग**, फरवरी सन् 1979 पृ. 301
17. राजेन्द्र प्रसाद, **कबीरपंथ का उद्भव एवं प्रसार** पृ. 20
18. केदारनाथ द्विवेदी, **कबीर और कबीर पंथ**, पृ. 346
19. विनयकुमार पाठक, **छत्तीसगढ़ के स्थान नामों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन** (शोध प्रबंध) 1994
20. भूपेन्द्र नाथ शर्मा द्वारा हस्तलिखित, **कबीर धर्मनगर खरसिया** पृ. 2-3
21. केदारनाथ द्विवेदी, **कबीर और कबीर पंथ**, पृ. 177
22. सुशीला पाण्डेय, **छत्तीसगढ़ में रचित कबीरपंथी साहित्य का सांस्कृतिक अनुशीलन** पृ. 147
23. बलदेव मिश्र, **छत्तीसगढ़ परिचय**, सन् 1950, प्रस्तावना
24. प्यारेलाल गुप्त, **प्राचीन छत्तीसगढ़** सन् 1973 पृ. 198.
25. मुकुन्दानंद शर्मा, श्रीसद्गुरु कबीर महामहिमा, पृ. 198
26. वही पृ. 199
27. स्नावी ब्रह्मलीन मुनि, **सद्गुरु श्रीकबीर चरितम्** पृ. 724
28. एफ़ ई.की **कबीर एण्ड हिज फालोअर्स**, सन् 1931 पृ. 97
29. केदारनाथ द्विवेदी, **कबीर और कबीर पंथ** पृ. 108
30. राजेन्द्र प्रसाद, **कबीर पंथ का उद्भव एवं प्रसार**, पृ.62
31. वही पृ. 63
32. वही पृ. 63
33. राजेन्द्रप्रसाद, **कबीरपंथ का उद्भव एवं प्रसार** पृ. 63
34. केदारनाथ द्विवेदी, **कबीर और कबीरपंथ** पृ. 176
35. मुकुन्दानंद शर्मा, **श्रीसद्गुरु कबीर महामहिमा** पृ. 215
36. **दैनिक देशबन्धु**, रायपुर, रविवार, दिनांक 6 सितम्बर 1992
37. केदारनाथ द्विवेदी, **कबीर और कबीरपंथ** पृ. 349
38. वही पृ. 349.

आर. एन. आई. पंजीयन क्रमांक : MPHIN/1997/2224

ISSN 097-6459

छत्तीसगढ़ बना नंबर वन

Credible Chhattisgarh

विश्वसनीय छत्तीसगढ़

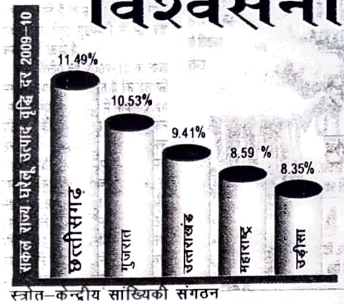

स्रोत–केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन

सकल राज्य घरेलू उत्पाद–वृद्धि दर 11.49 प्रतिशत,*

विगत 5 वर्षों में औसत विकास दर 10.89 प्रतिशत
देश में सर्वाधिक तेजी से विकास करता राज्य

छत्तीसगढ़ में है भारत का–

- 20% आयरनओर
- 17% कोयला भण्डार
- 12% डोलोमाइट
- 12% वन
- 100% टिन

विकास की दौड़ में हम अव्वल

छत्तीसगढ़ में होता है भारत का–

- 16% खनिज उत्पादन
- 27% स्टील एवं स्पांज आयरन
- 30% एल्युमिनियम उत्पादन
- 15% सीमेंट उत्पादन

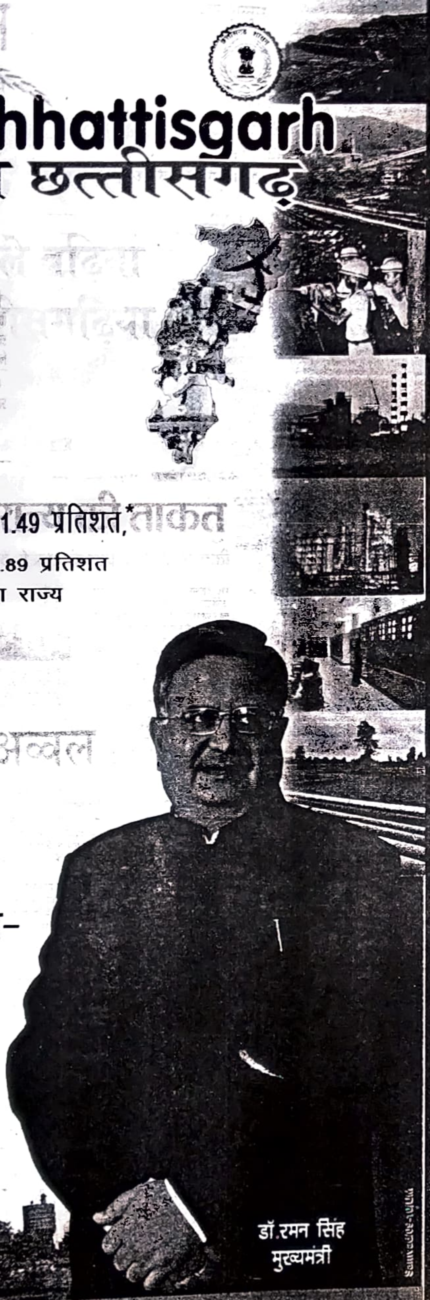

स्वामी : डॉ.(श्रीमती) तृषा शर्मा की ओर से मुद्रक : श्री नवीन अग्रवाल द्वारा गीता पब्लिकेशंस, महामाईपारा, रायपुर (छ.ग.) से मुद्रित तथा प्रकाशक : डॉ.(श्रीमती) तृषा शर्मा द्वारा 280, सेक्टर-4, दीनदयाल उपाध्याय नगर, डगंनिया, रायपुर से प्रकाशित. संपादक : डॉ. सुधीर शर्मा, दूरभाष : (0771) 226

एन. आई. पंजीयन क्रमांक : MPHIN/1997/2224

ISSN 097-6459

SHODH-PRAKALP

A Quarterly Research Journal

शोध-प्रकल्प

त्रैमासिक रिसर्च जर्नल

Editor
Dr.Sudhir Sharma

Volume LV | Number 02 | April-June, 2011

ISSN 097-6459 www.shodh-prakalp.com **शोध–प्रकल्प**
त्रैमासिक रिसर्च जर्नल

रूद्री नवागांव का जंगल सत्याग्रह

राधेश्याम पटेल
(शोध छात्र)
इतिहास अध्ययन शाला
पं.रविशंकर विश्वविद्यालय,रायपुर (छ.ग.)

जंगल सत्याग्रह का अर्थ और कारण – छत्तीसगढ़ का अतीत अत्यंत गौरवपूर्ण एवं शौर्य की गाथाओं से भरा हुआ है। आजादी के आंदोलन में छत्तीसगढ़ ने अपनी भूमिका बड़ी वीरता से निभाई, सविनय अवज्ञा आंदोलन के अंतर्गत छत्तीसगढ़ में जंगल सत्याग्रह अधिक महत्व रखता है। यह आंदोलन जुलाई 1930 से आरंभ होकर दिसंबर के बीच सर्वाधिक अवधि तक चलने वाला आंदोलन था। सत्याग्रह आंदोलन का यह नया स्वरूप "जंगल सत्याग्रह" के रूप में हमारे सामने आया। गांधीवादी आंदोलन का सिद्धांत था कि यदि व्यक्ति को उसके मूलभूत अधिकारों से कानूनों द्वारा वंचित किया जाता है तो ऐसे अन्याय कानूनों का विरोध होना ही चाहिए। इसी पृष्ठ भूमि को ध्यान में रखकर जंगल सत्याग्रह का कार्यक्रम बनाया गया था।[1]

वस्तुतः जंगल सत्याग्रह का प्रमुख कारण जंगल जनित वस्तुओं और जंगल के उपभोग पर प्रतिबंध से संबंधित था। जनजातियों एवं मूल निवासियों को अब लाइसेंस प्राप्त करने पर ही जंगल प्रवेश एवं उपयोग संभव था। मूल निवासी इस व्यवस्था को स्वीकार नहीं करना चाहते थे। फलस्वरूप जंगल के कानून का उल्लंघन अनिवार्य हो गया था। और जगह–2 जंगल सत्याग्रह करके जंगल कानून को तोड़ा गया। इस तरह यह एक आंदोलन का रूप ले लिया था।[2]

वन अधिनियम :– इस अधिनियम के लागू होने के पूर्व भारत में भारतीय वन–विधान 1878 प्रयोग में लाया जाता था। इस अधिनियम के बनने के उपरांत इसके चार संशोधनों जो 1890,1901,1918 एवं 1919 में हुए का एकीकरण किया गया हैं विधेयक के उद्देश्य एवं कारणों का प्रकाशन भारतीय राजपत्र 1926 खंड 5, पृ. 165 में दिया गया है।

संक्षिप्त नाम :– इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम भारतीय वन अधिनियम 1976 है।[3]

0 **आरक्षित वन** :– धारा–3 राज्य सरकार ऐसी किसी वन भूमि या पड़त भूमि जो सरकार की सम्पत्ति हैं या जिस पर सरकार का अधिकार है या किसी वनोपज की पूरी अथवा किसी भाग की सरकार हकदार है। इसके पश्चात् उपबन्धित रीति से आरक्षित वन बना सकेगी। यह वनाधिनियम सन् 1887 धारा –3 के अंतर्गत वर्णित है।[4]

0 **संरक्षित वन** :– वनाधिनियम 1878 धारा 29 के तहत राज्य शासन के किसी भी ऐसे वन क्षेत्र या वन भूमि जो आरक्षित भूमि न हो उसे अपने संरक्षण में लेकर संरक्षित वन घोषित कर सकता है। ऐसे संरक्षित वनों में वनों की कटाई, वनवर्धन, वृक्षारोपण आदि आदि कार्य कराये जा सकते हैं

नियम 1 इस नियम में जब तक अधिनियम का उल्लंघन न हो :–

क. अधिनियम से तात्पर्य, भारतीय वन अधिनियम (1878 का सेक्शन 29) से है।

ख. कृषक से तात्पर्य उस व्यक्ति से है जो खुद

कार्य करे या जो सामान्यतः स्वतः कार्य करता हो जिसमें कृषि मजदूर एवं ग्रामीण शिल्पी सम्मिलित है।

ग. सांराशीकरण से तात्पर्य संरक्षित वन से सिर्फ समुचित मात्रा में निरंतर या पैदावार सद्भावपूर्ण घरेलू उपयोग या उपजीविका कार्य के लिए हो, किंतु वस्तु विनिमय, विक्रय या दुरूपयोग के लिए न हो, प्राप्त करने की सुविधा के बदले में निश्चित राशि पूरे वर्ष में एक बार देने से है।

घ. 'अनुज्ञप्ति' से तात्पर्य इन नियमों के अंतर्गत अधिकृत अधिकारी द्वारा प्रदत्त अनुज्ञप्ति से है।

ड. विस्तार के अर्थ में निम्नलिखित नियम सम्मिलित है।

1. काश्तकारी, औजारों, नयें मकानों का निर्माण,मकानों की मरम्मत और काश्तकारों के मवेशी, कोठा के लिए आरक्षित वृक्षों या इस संबंध में विशेष रूप से स्वीकृत रक्षित वृक्षों की इमारती लकड़ी।

2. सूखी गिरी लकड़ी जो इमारती लकड़ी के उपयुक्त न हो।

3. अनारक्षित झाड़ों की छाव या बल्कल

4. उपजीविका निस्तार से तात्पर्य है जीविकोपार्जन के लिए किसी धंधे को चलाने के लिए आवश्यक निस्तार से है।

5. पास इन नियमों के अंतर्गत या तत्समय प्रभावशाली कोई अन्य विधिनियम आदेश के अंतर्गत प्राधिकृत अधिकारी द्वारा दिया गया पास जिसमें सांराशीकरण पास भी सम्मिलित है।[5]

आरक्षित या संरक्षित वनों में वन ग्रामों की स्थापना नियम 1878 धारा 27

मध्यप्रदेश वन ग्रामनियम–

1. यह नियम भारतीय वन अधिनियम द्वारा मध्यप्रदेश राज्य में वनभूमि पर स्थापित वन ग्रामों में लागू होगे। ये नियम मध्यप्रदेश वन ग्राम नियम कहलायेगें।

2. सभी विद्यमान वन ग्रामों को इन नियमों से अधिसूचित किये जाने के दिनांक से नियमों के अधीन वन ग्राम माना जायेगा।

3. वन संरक्षक तथा अन्य वन अधिकारी, वन ग्रामों की स्थापना के लिए प्रस्ताव तैयार करते समय न केवल किसी विशिष्ट क्षेत्र में वन कार्यो के लिए श्रमिकों की आवश्यकता को ध्यान में रखेगें बल्कि इस बात का भी ध्यान रखेगें की ऐसे ग्रामों में बसने वाले व्यक्तियों को कृषि या सहायक व्यवसायों के माध्यम से उनको आजीविका उपार्जन के लिए पर्याप्त सुविधाएं प्राप्त हो।

4. वन में आग लग जाने की स्थिति या आपात मामलों में वन मण्डलाधिकारी या उसके अधिनस्थ कर्मचारी वनग्राम के आदिवासी या उसके परिवार के सदस्य को वन ग्राम के कार्यो में सामान्य मजदूरी पर काम करने के लिए कह सकेगे।

5. आदिवासी उतने ही पशु रखने का हकदार होगा, जितने पशु राजस्व ग्रामों के निवासी निस्तार नियमों के अधिन रख सकते है। वह उसी मान पर चराई शुल्क या भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होगा।[6]

0 **चराई नियम** :– भारतीय वन अधिनियम 1878 की धारा 26 की उपधारा (2) के खण्ड (क) की धारा 32 के खण्ड (ट) तथा धारा 76 द्वारा प्रदत्त शक्तियों को प्रयोग में लाते हुए राज्य सरकार , एतद् द्वारा संपूर्ण मध्यप्रांत में सरकारी वनों में चराई विनियमन करने के लिए निम्नलिखित नियम बनाये।

संक्षिप्त नाम– इन नियमों का संक्षिप्त नाम मध्यप्रांत चराई नियम 1887 है।

चराई अनुज्ञप्ति'– वन में पशुओं को चराने के लिए प्रभागी वन अधिकारी द्वारा या उसके द्वारा विज्ञप्ति जारी करने के लिए प्राधिकृत किसी अधिकारी द्वारा जारी अनुज्ञप्ति या आज्ञापत्र

चराई ईकाई– वन क्षेत्र की वह इकाई जो चराई के लिए खुली छोड़ी गयी हैं

चराई भार– पशु इकाईयों की वह अधिकतम संख्या जिसे वन क्षेत्र के प्रति हेक्टेयर मे चराई की अनुज्ञा दी जा सकेगी।

0 **पशु अतिचर** – 13–1–1871 (यह 1878 में भी लागू था) धारा–70 किसी आरक्षित वन में या किसी

संरक्षित वन के किसी प्रभाग में जो विधि पूर्णत चारागाह के लिए बंद किया गया है। अतिचार करने वाले पशुओं को पशु अतिचार नियम 1871 की 1 की धारा (II) के अर्थ में लोग बागान को नुकसान करने वाले पशु समझा जायेगा और किसी वन अधिकारी या पुलिस अधिकारी द्वारा अधिग्रहित किया जा सकेगा।

धारा – 71 :– पशु अतिचार अधिनियम 1871 का 1 की धारा 12 के अधीन नियम जुर्माने के बदले इस अधिनियम का धारा 70 के अधीन परिबद्ध हर पशु के लिए ऐसा जुर्माना अधिग्रहित किया जायेगा जैसा वह ठीक समझती है। किंतु वह निम्नलिखित से अधिक नहीं होगा।'

पशु जुर्माने की राशि

1. बछेड़ा व बछेड़ी, खच्चर, सांड, (एक रूपया) बैल, गाय या बछड़ी
2. बछड़े, गधा, सुअर, भेड़ें, (पचास पैसे) भेढ़ी, मेमने, बकरी

उपरोक्त वन अधिनियमों से उपजा असंतो ा 1927 के भारतीय वन अधिनियम में और गहरा गया जिसमें उपरोक्त नियम की विशद् व्याख्या की गयी थी और साथ ही उसके तत्कालीन कानून व्यवस्था को भी प्रभावित किया। एक्ट XVI 1927 के तहत संरक्षित और आरक्षित वन पूर्णतः शासनाधीन किये गये थे। जिन पर जनता का अधिकार नहीं था। वनाधिकारी लकड़ी और वनोपज पर कर लगाने व बढ़ाने के अधिकार नहीं था। वनाधिकारी लकड़ी और वनोपज पर कर लगाने व बढ़ाने के अधिकारी थे, और तत्संबंधी नियम और कानून उन्ही के अधिकार सीमा में आते थे। चराई नियम का और कठोरता से पालन किया जाना था और किसी भी स्थिति में इस नियम का उल्लंघन करने पर कठोर दण्ड का प्रावधान था।[8]

वन अधिनियमों ने स्पष्ट इंगित है कि प्रकृति प्रदत्त वन को सरकारी सम्पत्ति घोषित किया था। जिस पर आम जनता का कोई अधिकार नहीं था। ग्रामीण व आदिवासी जनता जिनका दैनिक जीवन वनो द्वारा प्रभावित था। उनके लिए ये अधिनियम न केवल गलत वरन् अन्यायपूर्ण था जिसका विरोध होना ही था।

(2) सिहावा नगरी की घटना :– धमतरी नगर और तहसील राष्ट्रीय जागृति की दृष्टि से सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ का नेतृत्व कर रहा था। और उसकी ख्याति प्रदेश और राष्ट्रव्यापी हो चुकी थी। इस समय (1920–22) के बीच इस आदिवासी क्षेत्र में अत्यधिक जागृति फैल चुकी थी और सिहावा की 80 प्रतिशत आबादी आदिवासी आबादी थी।

धमतरी के आंदोलनकारी नगरी को प्रचार का अपना मुख्य गढ़ बनाया। सन् 1922 में अन्यायपूर्ण वन कानूनों और वन विभाग की ज्यादतियों के विरोध में धमतरी तहसील के सिहावा नगरी के आदिवासियों ने सत्याग्रह प्रारम्भ किया। ब्रिटिश सरकार की अन्यायपूर्ण वन संरक्षण नीतियों तथा वन विभाग के अधिकारियों द्वारा किये जा रहे शोषण के विरूद्ध आदिवासियों में लम्बे समय से असंतोष था। जिसे हवा देने का कार्य धमतरी तहसील के कुछ स्वयं सेवक दिसम्बर 1921 में अहमदाबाद में हुए कांग्रेस सम्मेलन में भाग लेकर लौटे और सिहावा आकर आदिवासियों को ब्रिटिश शासन का विरोध करने के लिए प्रेरित किया।[9]

सिहावा नगरी का यह जंगल सत्याग्रह 1922 के प्रथम सप्ताह से आरम्भ हुआ। स्वयं सेवकों ने आदिवासियों को उकसाया कि वे वन कानूनों की परवाह न करते हुए आरक्षित जंगलों से अपने निस्तार के लिए लकड़ियाँ काटकर ले आये।[10]

125 निवासियों ने क्रमशः शासकीय आदेश की अवहेलना करते हुए जंगल की जलावन लकड़ी काटकर ले जाने की योजना बनायी। इस योजना को अंजाम देने के लिए सुन्दर लाल शर्मा, नारायण राव मेघावाले, श्यामलाल सोम, पंचम सिंह, मुद्रा ठाकुर, विशम्भर पटेल, पं. गिरधारी लाल का सक्रिय सहयोग उल्लेखनीय था। जनवरी 1922 में वन अधिकारियों ने इन सत्याग्रहियों पर चोरी का मुकदमा चलाया और पुलिस अत्याचार अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था। यहाँ तक की स्त्रियों को भी लाठियों से मारा गया था। इस घटना स्थल पर, रायपुर जिला अधिक्षक ने भ्रमण किया तथा अपने गोपनीय पत्र में इसका वर्णन किया, जिसमे उसने कहा था कि जब वे वहाँ गये, वहाँ उन्हे काफी कठिनाइयों का सामना करना पडा। इनका कर्मचारी जब स्थानीय बाजार में खरीद करने गया, तो विक्रेता ने इन्हें सामाने बेचने से इन्कार कर दिया किन्तु व्यापारी ने जब बेचना चाहा तो बाजार मूल्य से चार गुना अधिक वस्तु का दाम बताया। इसके अतिरिक्त शासकीय अधिकारियों का बहि कार वहाँ के नाई, ग्वाला तथा धोबी आदि लोगों ने किया, फलस्वरूप इनकी सेवाएँ नहीं ली जा सकी। इस प्रकार की घटना अभूतपूर्व थी तथा असहयोग आंदोलन के इतिहास में प्रथम श्रेणी में उद्धत की जाने वाली यह घटना मानी जा सकती है।[11]

(3) प्रभाव :– जंगल सत्याग्रह जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है यह सत्याग्रह जंगल सम्बंधी अधिकारों से जुड़ा हुआ था। जंगल किसी शासक या किसी वर्ग विशेष की बपौती नहीं है बल्कि आम जनता की सम्पत्ति होती है और इस सम्पदा को छिनने का अधिकार किसी को नहीं है। क्योंकि यह एक नैसर्गिक सम्पदा है। प्रकृति द्वारा प्रदत्त सम्पत्ति है जंगल सत्याग्रह इसी मूलभूत भावना को लेकर सत्याग्रह के कार्यक्रमों में शामिल किया गया था।

छत्तीसगढ़ सहित मध्य प्रांत का बहुत बड़ा हिस्सा इस सत्याग्रह से प्रभावित था। छत्तीसगढ़ का सुदूर ग्रामीण वनांचल क भाक व आदिवासी स्त्री–पुरूष व बच्चे, किसान व मजदूर अर्थात छत्तीसगढ़ का सम्पूर्ण ग्रामीण अंचल इस कार्यक्रम के माध्यम से सविनय अवज्ञा आंदोलन से जुड़ चुका था। वैसे तो सम्भवतः छत्तीसगढ़ ही वह एक मात्र क्षेत्र था जहाँ असहयोग आंदोलन के दौरान भी जंगल सत्याग्रह की घटनाएँ घटी और भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान भी, पर वास्तव में कार्यक्रम के रूप में यह सविनय आंदोलन का हिस्सा था। जंगल सत्याग्रह का सबसे बड़ा महत्व इस बात में नीहित है कि इसने वास्तव में जन–जन को राजनीतिक आंदोलन से जोड़ दिया जो इसके पहले देश में क्या है, इससे अप्रभावित थे।

सिहावा नगरी के इस जंगल सत्याग्रह के पूरे घटनाक्रम में हमे उनके साहस व निर्भिकता के स्पष्ट दर्शन होते है, इस आंदोलन में सीधे–साधे ग्रामीण जनों को न केवल अपने अधिकारों के प्रति चैतन्य किया, उनकी रक्षा करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञा और अहिंसा के रास्ते पर चलते हुए अपने अदम्य साहस का परिचय दिया, बल्कि आंदोलन की घटनाओं में उनके अन्दर दबी हुई नैसर्गिक नेतृत्व प्रतिभा को उभारा। जंगल सत्याग्रह की घटनाएँ किसी राष्ट्रीय क्रांति या नेत त्व में नहीं हुई, बल्कि ग्रामीणों के बीच से ही कोई नेता उभर आता था और उसके बन्दी होने पर दूसरा व तीसरा यह क्रम अनवरत् चलता रहा, इस प्रकार जंगल सत्याग्रह ने आदिवासियों की नेतृत्व क्षमता को बढ़ाया, उनकी जन्मजात साहस, सत्यनिश्ठा के गुणो को प्रदर्भित करने का अवसर दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

(1). जे.पी.श्रीवास्तव – मध्य प्रदेश वन विधि मार्ग दर्शिका, पृ.–1 इन्दौर लेखापाल लॉ हाउस सन् 1978

(2). जे.पी.शर्मा – मध्य प्रदेश में राष्ट्रीय आंदोलन (छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ में) (1920–1947) 1989, नई दिल्ली एवं अमृत संदेश – कांग्रेस शताब्दी समारोह अंक, 28 जुलाई 1985, पृ.–28

(3) जे.पी. श्रीवास्तव, पूर्वोक्त, पृ–1

(4) बी.आर.मार्टिन एण्ड डब्लू.वी. चिलोटी, ए.आई.आर मेन्वल, सिविल एण्ड क्रिमिनल, संस्करण–4, खण्ड–'XIX' प .–611

(5) वही पृ. 604–605

(6) जे.पी.श्रीवास्तव, पूर्वोक्त, पृ.–61

(7 वही, पृ.–67

(8) वही,पृ.–146

(9) वी.आर.मार्टिन एवं डब्लू.वी.चिलोटी, पूर्वोक्त, पृ.604–605

(10) रामगोपाल शर्मा, छत्तीसगढ़ के रायपुर जिले में स्वतंत्रता संग्राम आंदोलन (धमतरी तहसील के विशेष संदर्भ में) पृ. 37–38. (1857–1947) पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय 1983 एवं फाइल संख्या 5/3 हिस्ट्री आफ फ्रिडम मुवमेंट पेपर्स, रूद्री नवागांव जंगल सत्याग्रह पृ. 2

(11) वही, मंत्री धमतरी तहसील कांग्रेस समिति की रिपोर्ट के आधार पर.

पंजी.क्र. CHH.MUL-00003

श्री कैलाश चन्द्र पन्त अमृत महोत्सव रायपुर
श्री बद्रीधर दीवान, श्री कैलाश चन्द्र पन्त, डॉ. रामकुमार बेहार,
निर्मला बेहार, छ.ग. शोध संस्थान की ओर से अभिनंदन पत्र देते हुए

बाएं से डॉ. रामकुमार बेहार, बबन प्रसाद मिश्र, पद्मश्री महादेव पाण्डे,
बालचन्द कछवाहा, डॉ. सुधीर शर्मा छ.ग. शोध संस्थान के कार्यक्रम में

डॉ. रामकुमार बेहार का सम्मान करते छ.ग. के मुख्यमंत्री डॉ. रमन सिंह

निर्मला बेहार, डॉ. रामकुमार बेहार का सम्मान करते छ.ग. के
मुख्यमंत्री डॉ. रमन सिंह, डॉ के के झा श्रीमती झा

छ.ग. शोध संस्थान [illegible]
सप्तक चार का विमोचन, [illegible]
श्री बद्रीधर दीवान, श्री [illegible]

श्रीमती निर्मला बेहार सचिव छत्तीसगढ़ शोध संस्थान,
370 बेहार मार्ग सुन्दर नगर, रायपुर द्वारा प्रकाशित

ISSN- 0976-7894

शोध उपक्रम

31

॥ ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं ॥

संपादक
डॉ रामकुमार बेहार
निर्मला बेहार

प्रकाशक
छत्तीसगढ़ शोध संस्थान, 370 बेहार मार्ग सुन्दर नगर, रायपुर (छ.ग)

छत्तीसगढ़ की संस्कृति और परम्परा

● राधेश्याम पटेल

किसी भी समाज में उच्च स्तर का नैतिक चरित्र सत्य के प्रति निष्ठा, रहन–सहन, स्वच्छता और व्यवहार में सभ्यता का विकास सौ पचास वर्षो में विकसित नहीं हो जाता. समाज को इस स्तर तक उठने में सैकड़ों हजारों वर्ष लग जाते हैं. उच्च कोटि की नैतिक शिक्षा कठोर साधना और तपस्या के पश्चात ही उच्च स्तर की संस्कशति और सभ्यता के शिखर पर पहुंचा जा सकता है.

छत्तीसगढ़ स्थल पथ से उत्तर एवं दक्षिण भारत से जुड़ा हुआ था. इसलिये वहां के वन कांतर सुरक्षित, आर्थिक समशद्धि पूर्व एवं परिवर्तन के तेज झंझावात से प्रभावित नहीं हुआ यही कारण है कि यहां के निवासी एक ओर परम्परावादी है तो दूसरी ओर सरल स्वभाव वाले सहज बिना छल–कपट वाले अतिथि समर्पित ढकोसलों से दूर रहने वाले कश्पालू हैं।[1]

मनुष्य की अस्मिता उसकी संस्कशति से होती है छत्तीसगढ़ के प्राचीन इतिहास से यह स्पष्ट है कि वैदिक युग से ही शिव रूद्र की उपासना की जाती थी. कालान्तर में नलवंश,पांडुवंश, कलचुरि वंश के शासक परम शिव भक्त रहे.प्रत्येक ग्राम में तालाब के पास शिव मंदिर दिखाई पड़ता है. स्नान के पश्चात शिव मंदिर में जल चढ़ाने की हमारी उदात्त परम्परा ग्रीष्मकाल मे निरंतर जलाभिषेक तक पूर्ण होती है. ग्राम के बड़े बुजुर्ग तालाब के मेड़ में शिव मंदिर की स्थापना कर पुण्य लाभ करते हैं. यहां यह भी दश्ष्टव्य है कि मंदिर के पूर्व खुले में ही शिवलिंग की स्थापना करते हैं और उसी के समीप बरगद या पीपल का वश्क्ष लगाकर दोहरे पुण्य के भागी बनते हैं. यहां यदि हम राजाश्रय या राजकीय संरक्षण को छोड़ भी दे तो रायपुर जिला के खल्वाटिका किंवा खलारी ग्राम में देवपाल मोची ने नारायण का मंदिर बनाया वहीं राजिम मेंस्थिति राजीव लोचन मंदिर का जीर्णोद्वार सामंत जगतपाल ने कराया किन्तु वह भव्य विष्णु प्रतिमा राजिम तेलिन के द्वारा दुर्लभ प्राप्ति के बाद सर्वदर्शनार्थ मंदिर में स्थापित कराया गाय था.यही छत्तीसगढ़ की परम्परा रही है कि धार्मिक आस्था चाहे किसी की भी हो उसमें जातिगत कोई बंधन कभी नहीं रहा है।[2]

यह स्वस्थ्य परम्परा आज भी हमें दिखाई देती है. मातश्देवियां सदैव पूजनीय रही है. सिरपुर में महिषासुर मर्दिनी पाली में चामुण्डा देवी,रतनपुर में सप्तमातश्का महामाया, टेकरी में बीरा देवी, मातश्रूपा दर्शनीय भी है. इसलिये छत्तीसगढ़ में शक्ति पूजा आज भी यथावत है.ग्रामों में शीतला मंदिर माता ग्राम रक्षिका है जहां शीतला शांति पाठ पूजा प्रतिवर्ष आषाढ़ महिने में होता है वहीं चेचक के प्रकोप के समय नीम की पत्ती को मुख्य द्वार में बांधकर उस स्थान में शांत रहने शोरगुल नहीं करने,तेज मिर्च मसाले की बघार न करने हेतु स्वयंमेव दिशा निर्देश मिल जाता है. चेचक बड़ी माता के प्रकोप से मुक्ति केलिये शीतल माता शांति अनिवार्य है उस दिन पूरे ग्राम के प्रभावित जन कतारबद्ध होकर शीतला माता शांति करते एवं सेवक वश्ंद शांतिपाठ भजन गाते हुये पूजा पूर्ण करते हैं एक ओर मातश्रूप में यह पूजनीय देवी हैं तो दूसरी ओर शक्ति रूप में भी आराध्य रही है. ऐसा माना जाता हैंकि पहले छत्तीसगढ़ के इन शक्ति पीठों में पशु बली की प्रथा रही है किन्तु अब समय के साथ उसमें परिवर्तन आया है. छत्तीसगढ़ में मां दंतेश्वरी, खल्लारी माता, डोगरगढ़ बम्लेश्वरी, महामाया रतनपुर, विध्यवासिनि देवी धमतरी, महामाया कंकाली देवी रायपुर, झलमल मंदिर, बलोद एवं अम्बागढ़ चौकी चंद्रहासिनी देवी चंद्रपुर रायगढ़ आदि सिद्ध शक्तिपीठ है. इस शक्तिपीठों मे उपासना मान्यता आदि पारम्परिक धार्मिक कार्यो का सुफल हर भक्त को प्राप्त होता है भक्त परिवार के लोग प्रति तीसरे वर्ष अपने घर में ही चैत्र नवरात्रि अथवा क्वांर नवरात्रि में जोत जलाते है जंवारा बोकर शक्ति की उपासना करते है. श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं।[3]

● (शोध छात्र) इतिहास अध्ययन शाला पं.रविशंकर विश्वविद्यालय,रायपुर (छ.ग.)

नव दिवसीय इस मांगलिक शक्ति पूजा में यह परिवार अपने बिरादरी के रिश्तेदारों को भी न्यौता देकर पधारने को आग्रह करते हैं और कुटुम्ब इष्ट मित्रों सहित शक्ति की उपासना करते श्रद्धा सुमन करते हैं. शक्ति उपासना के इसी अवसर पर देवी आरोहण भी होता है जिसे बैगा लोकमंत्र शक्ति से निबंधित कर उपासना में सहयोग करते हैं. तांत्रिक लोग मंत्र सिद्धि के उपक्रम भी करते हैं. चम्पारण राजिम के पास जिला रायपुर में प्रभु वल्लभाचार्य का जन्म स्थल है जहां पर्व विशेष में विश्व भर के अनुयायी दर्शनार्थ आते हैं. वही छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ के संस्थापक धर्मदास थे. पंथाचार्यो की गद्‌दी दामाखेड़ा में स्थपित हुई. दर्शनार्थियों के लिये रहने, खाने,सोने आदि की निःशुल्क व्यवस्था होती है. लाखों श्रद्धालु कबीर पंथी अनुयायी आते है.दामाखेड़ा अंतर्राष्ट्रीय स्तर का कबीरपंथियों केलिये तीर्थ स्थल है. पंचाचार्यो की समाधि स्थल है।. इसी प्रकार रायपुर जिला के उत्तरी क्षेत्र में स्थित पवित्र स्थल गिरौदपुरी सतनामी पंथ के संस्थापक गुरू घासीदास की तपो स्थली है. कबीर पंथ एवं सतनाम पंथ ने जाति एवं वर्ग व्यवस्था के विरूद्व संघर्ष किया, समाज सुधार किया. नैतिक आचरणों पर जोर दिया. सत्य, अहिंसा और प्रेंम का शंखनाद किया था. कर्मकाण्ड बाह्य आडम्बर एवं मूर्ति पूजा का विरोध किया इसीलिये छत्तीसगढ़ में राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना के विकास में इनका महत्वपूर्ण योगदान है. वर्तमान में इनके अनुयायियों की गुरू पूजा सर्ववंदनीय है।[4]

द्वितीयतः लोक संस्कशति का समावेश किया जा सकता है. लोक कला लोक साहित्य, लोक गीत, लोक कथा, लोक संगीत, लोक नश्त्य का समन्वित रूप ही लोक संस्कशति है. मिट्टि की कच्ची दीवारों में अंकित भक्ति चित्र आज भी उसी परम्परा में निर्बाध चले आ रहे है. नवीन गश्ह निर्माण के पश्चात ईश्वराधना एवं घर के चारों ओर हाथ देने की प्रथा परिवार की मंगलकामना के साथ तंत्र मंत्र से सुरक्षा का अभयदान, अभिस्वीकशति देता है, वहीं हाथ देने वाली सुहासिन महिला को उपहार देने की स्वस्थ परम्परा भी छत्तीसगढ़ में विद्यमान है. इसी तरह हर तीज त्यौहारों में चौक पुरना चांवल के आटे से ही हमारी परम्परा रही है. तीर्थाटन से लौटे स्नेहियों को महत्वपूर्ण उपलब्धि ायों के लिये सम्मानित व्यक्ति को दसेरा पर्व मे विवाह के अवसर पर वधु को अन्याय स्मरणीय प्रसंगों में चांवल के आटे से चौक पुरकर पीढ़ा चौकी रखकर आरती उतारने का प्रसंग सर्वत्र दिखाई पड़ता है. सावन माह में गोबर के द्वारा घर के दरवाजे पर चित्रांकन सवनाही का प्रतीक घर की सुरक्षा, अनिष्ट शक्तियों से एवं परम्परा के प्रवाह पर आधारित है. अनेक बार भित्ति चित्रों मे स्त्री पुरूष नाग नागिन का समावेश ही होता है।[5]

छत्तीसगढ़ के लोकगीत प्रकशति के उद्‌गार है.संगीत छत्तीसगढ़ के आदिवासियों का जन्मजात गुण है. उनका लोक गीत एवं नश्त्य की ताल में आत्मविभोर आदिवासी सब कुछ भूलकर रात्रि पर्वत नश्त्य मग्न रहता है. लोकगीत सरल सहज अकशत्रिम एवं बौद्धिक चमत्कार से रहित होते है. लोकगीतों एवं लोक नश्त्यों के नामांकन की आवश्यकता नहीं है किन्तु दीपावली पर्व के समय सहल दश्श्य सुवानश्त्य, राउत नाचा छत्तीसगढ़ की स्वस्थ एवं उल्लासमय अभिव्यक्ति का अप्रतिम आदर्श है. ग्रामीण अंचल मे आज भी जन समर्थन मिलने का मुख्य केन्द्र नाचा मड़ई ही है राऊत अपने साथ तोरन पताका युक्त मंड़ई लेकर चहुओर घूमते हैं एवं दोहा पारते हुये विशाल जनसमुदाय को आकश्ष्ट करते हैं इसी परम्परा में छत्तीसगढ़ लोकजीवन से सम्पूरित होना लोक प्रचलित कहावतें मुहावरे आज भी सरल ग्रामीण के श्रुद्धि चापल्य को स्वीकारता है. संस्कार गीतों की अपनी परम्परा नारियों में मध्य मौखिक ही चली आ रही है. गौरा गीत में आज भी यह उन्माद, उल्लास, उमंग है कि देवी आगमन सहज ही हो जाता है. छत्तीसगढ़ी नाचा रात भर होते हैं.

इस प्रसंग में आदिवासी संस्कशति के संपोषक घोटुल की परम्परा का उल्लेख समीचीन होगा. यह एक पारम्परिक सामाजिक व्यवस्था है जिसकी पवित्रता पर संदेह नहीं किया जा सकता. घोटुल में कुमार एवं कुमारियां चेलिक एक साथ रात्रि में विश्राम करते हैं. घोटुल का संचालन बुजुर्गो की समिति करती है.परस्पर आत्मीयता का संबंध सदस्यों में होता है. विवाहोपरान्त सदस्यता स्वयंमेव समाप्त

होती है. तथाकथित सभा देशों के भद्रजन इस पवित्र प्रथा पर मिथ्यारोप गढ़ इसे उन्मुक्त सहचर्य का स्थल बताते हैं जबकि यह अनुचित है. जिस पवित्रता, सद्‌भावना एवं समर्पण का एकात्म भाव इस घोटुल में प्राप्त होता है उसका सामंजस्य क्लबों के भौड़े एवं अश्लील प्रदर्शन एवं स्वार्थथता से संभव नहीं है।[6]

तश्तीयतः पारिवारिक संदर्भो का समावेश किया जाना संभव है. यहां यह दश्ष्टव्य है कि छत्तीसगढ़ ही प्रचीन काल का कोसल है. इस क्षेत्र के नरेश कोसल या कासल्य कहलाते और राजकन्यायें कोसल्या कहलायी. आर्थात् अभिधेय अर्थ में स्थान वाची नाम का प्रचलन पूर्व में ही रहा है. यह परम्परा आज भी इस अंचल के शहर एवं ग्रामीण दोनों ही परिवेश में परिवार में प्राप्त होता है. बहुओं को उनके मायके के स्थानवाची नाम के साथ ही पुकारते हैं छत्तीसगढ़ में बड़े बुजुर्ग आदरणीय तथा पति या पत्नी को नाम से पुकारने की परम्परा नहीं है अति स्थानवायी अथवा गुणवाची होते हैं. जो प्राचीन परम्परा से अध्यतन प्रचलित है. यहां यह भी उल्लेखनीय है कि मामा भांजे का पैर पड़ते हैं चाहे उम्र में कितना भी अंतर हो, उसे कपिला भांचा कहकर हरसंभव सहायता करना मामा अपना रामायण कालीन परम्परा का ही प्रतिबिम्ब है जो कौशल्यानंदन राम के प्रति श्रवण केभाव परिलक्षित है. विद्यमान है।[7]

छत्तीसगढ़ में विवाह की स्वस्थ एवं वैज्ञानिक परम्परा है जहां वर–वधु के शरीर में कलसा का पानी एवं कच्ची हल्दी के लेपन आवश्यक है इसके बिना विवाह मंगलकारी नहीं। वहीं कमरछट व्रत में पसहर चांवल का भोग प्रसाद ग्रहण करने वाली व्रती महिलाओं के लिये बिना हल के जोते धरती में उत्पन्न भाजी की ही पारणा अनिवार्य है. हरितालिका तीजों का पर्व निश्चय ही छत्तीसगढ़ की अपनी और पूर्णतः निजत्व परम्परा है जहां तीजा व्रत पूर्ण करन के लिये महिलाओं को पितृगृह जाना ही जिसका इंतजार जन्माष्टमी पर्व से ही करती है भाई या पिता का रास्ता देखते हैं. ससुराल पक्ष कोई मनाही नहीं करता, जहां साडी आदि प्रदाय कर मायका पक्ष बिदा करता है मायकें में वह पति की दीर्घायु एवं मंगल की कामना करती है.इस प्रसंग में यह आवश्यक है कि छत्तीसगढ़ में पंचायत की प्रथा उदयतन यथावत है. आज भी सामान्य ग्रामीण पंचायत में हुक्का पानी बंद के दाड़ दण्ड से कांप उठता है जो असामाजिक तत्वों को सही मार्गदर्शन में परमावश्यक है।[8]

न्याधिकरण के कार्य को सहज सुगम बनाने मे समाज के प्रमुख पंचपरमेश्वर निष्पक्ष न्याय के लिये वंदनीय हैं. सही सामाजिक दण्ड हरेक को नैतिक बनाता है. छत्तीसगढ़ की संस्कशति गंगा में भाषायी संदर्भ अस्पश्श्य नहीं हो सकता। जब पौराणिक वैदिक दण्ड आज दांड है तो संस्कश्त का प्राचीनकाल की मजदूरी भूमि वर्तमान में भूती के लिये व्यवह्त है. इसी तरह पूंजी वस्न अब चीजबस तो छत्तीसगढ़ी भाषा का ही है. रखिया के फूल अथवा नन्हें फल में लकड़ी से गोड़ हाथपाव बनाकर पूजा करके बलिप्रथा को चुनौती देने वाले छत्तीसगढ़ की संस्कशति में आज भी दक्षिण दिशा अशुभकारी है जहां रक्सहू राक्षस का क्षेत्र मानकर वर्जना का भ्रम पालिक पोषित है।[9]

छत्तीसगढ़ियों का प्रिय भोजन बासी ही है जो इन्हें ताजगी एवं ठंडक दोनों ही प्रदान करता है वहीं चावल का पेज भी प्रिय है. धान के कटोरा से अभिहित छत्तीसगढ़ रायपुर एवं रतनपुर के गढ़ों का समन्वयक यह अंचल धान चांवल के समग्र उपादानों को चीला रोटी में समेटकर समग्र पुण्यि हिमायती रहा है. सगुण एवं निर्गुण परम्पराओं को स्वीकारते अप्रतिम समन्वयवादी संस्कशति है छत्तीसगढ़ की।

संदर्भ–सूची

1. गीता तिवारी,आभातिवारी, छत्तीसगढ संस्कृति एवं परिवेश, रायपुर (छ.ग.) 2003
2. तृषा शर्मा, छत्तीसगढ इतिहास, संस्कृति एवं परम्परा, दिल्ली–53, 2004
3. बसंती लाल बघेल, छत्तीसगढ़ भू–राजस्व संहिता, नई दिल्ली, 2004
4. प्यारे लाल गुप्त – प्राचीन छ.ग., पं. रविशंकर शुक्ल, वि.वि.रायपुर,1982
5. मदन लाल गुप्ता, छत्तीसगढ़ दिग्दर्शन, बिलासपुर म.प्र. 1996
6. टी.डी.शर्मा, छत्तीसगढ़ के पर्यटन स्थल, अरपा पॉकेट बुक, बिलासपुर 1999

■

Researcher's Today

e-mail:researcherstoday@yahoo.co.in
H.No. A-104, Housing Board Colony
Kota, Raipur - 492 010 (C.G.) INDIA
ISSN: 2231-4369

ISSN: 2231-4369

Researcher's Today

A Quarterly Research Journal

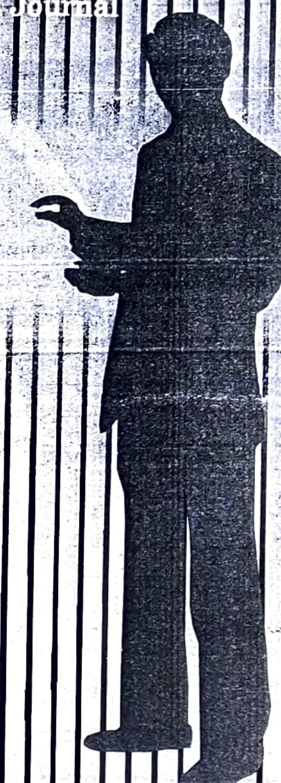

Editor-in-Chief
[illegible] A. Rajshe[illegible]ar

Vol. 1 No. 2 April 2011

Researcher's today
Vol.I NO.2 APR-JUN
(ISSN- 2231-4369)

महात्मा ज्योतिराव फूलेः द्वारा उन्नीसवीं शताब्दी में दलित उत्थान के प्रयास

राधेश्याम पटेल

महात्मा ज्योतिराव फूले अछूतों में मसीहा, स्त्री शिक्षा के कर्णधार, हिन्दू विधवाओं के उद्धारक और ब्राम्हणवाद के कट्टर शत्रु थे। वे एक ऐसे समाज की संरचना के लिए आजीवन प्रयत्नशील रहे, जिसका आधार सामाजिक और न्यायिक समानता हो। उन्होंने शूद्रों के हितों की रक्षा के लिए तथा महिलाओं का उद्धार करने के उद्देश्य से एक जबरदस्त आंदोलन प्रारम्भ किया था। महाराष्ट्र के कट्टरपंथी ब्राम्हणों ने ज्योतिराव फूले के कार्यों का विरोध किया था, किंतु वे अपने मार्ग पर अडिग रहे। महात्मा गांधी ने उन्हें वास्तविक महात्मा और वीर सावरकर ने उन्हें क्रांतिकारी समाज सुधारक कहा है।

महात्मा फूले ने निर्णय किया कि मैं हिन्दू समाज में व्याप्त छुआछुत, ऊँच–नीच, अन्याय, अमानवीयता और धर्म के नाम पर पल रहे, अधर्म को खत्म करके रहुँगा। दलित–शोषित समाज को सवर्णो की दासता से मुक्त करूँगा। उन्हें सामाजिक विषमताओं को जन्म देने वाले लोगों से चिढ़ थी और दलित–शोषितों से मित्रता। उन्होंने अपने टूटे–बिखरे और दबे हुए समाज को बताया कि 'अमर बेल बिना जड़ के होती है और जिस वृक्ष पर डाल दी जाती है उसे खोखला करके सुखा देती है और उसका अस्तित्व हमेशा क लिए मिट जाता है जबकि स्वयं सदा हरी–भरी रहती ह।' इसीलिए यह समझ लें कि ब्राम्हणवाद हम सभी दलित, पिछड़े और शूद्र सामाजिकों के लिए अमर बेल है। अतः हमें इसका मुकाबला करना होगा। इस तरह 21 वर्ष की आयु में ही ज्योतिबा फूले ने महाराष्ट्र राज्य के अछूतों को सामाजिक गुलामी से छुटकारा दिलाने का संकल्प लिया। उन्होंने देखा था कि अछूत अपनी इच्छानुसार जीवन नहीं जी सकते, उनका मान–सम्मान मनुस्मृति के काले कानूनों के कारण मिट चुका है। अतः ब्राम्हणवाद ही सारी विषमताओं की जड़ है।

ज्योतिबा फूले कर्म के बजाय जन्म पर आधारित कलुषित ब्राम्हणवाद को समूल नष्ट करने का बीड़ा उठाया। ज्योतिबा ने प्रतिपादित किया था कि शूद्र और अति शूद्र वस्तुतः क्षत्रिय थे, किन्तु जब ब्राम्हणों ने उनको जनेऊ पहनने से मना कर दिया, तो यही क्षत्रिय धीरे–धीरे शूद्र कहे जाने लगे। चौथा वर्ण तो ब्राम्हणों के द्वेष ने बना दिया। ब्राम्हणों ने दक्षिण

Researcher's today
Vol.I NO.2 APR-JUN
(ISSN- 2231-4369)

भारत में हिन्दू समाज को दो वर्गों में विभक्त कर दिया, प्रथम ब्राम्हण और द्वितीय शूद्र। महाराष्ट्र में क्षत्रिय और वैश्य उनकी दृष्टि में समाप्त हो चुके थे। 1855 के प्रारंभ में ज्योतिबा ने एक पर्चा 'असपृश्यांच कैफियत' अर्थात ' अछूतों की दशा। प्रकाशित किया। ज्योतिबा ने स्पष्ट लिखा है कि – ' यदि ब्राम्हण सचमुच देश भक्त होते तो देश के बहुसंख्यक हिन्दु समाज को उन्होंने शूद्र और अति शूद्र न बनाया होता तथा ये भ्रांति और कुत्सित धारणा न फैलाई होता, कि शूद्र के हाथ का स्वच्छ जल भी अपवित्र तथा पशुओं के मूत्र के समान है।' ज्योतिबा ने शूद्रों को संदेश लिखा है कि " वे जब तक हमारे देश में ब्रिटिश राज्य है अपने को शिक्षित एवं सुसंस्कृत बना ले। नहीं कहा जा सकता कि अंग्रेजी शासन कब समाप्त हो जाय। साथ ही उनको चाहिए कि सामाजिक समानता, स्वतंत्रता तथा मातृ भावना के लिए खुला संग्राम करने की शक्ति और साहस जुटा लें।

महात्मा फूले जाति प्रथा और अस्पृश्यता के घोर विराधी थे। उन्होंने समाज में ब्राम्हण वर्ग के एकाधिकार का विरोध किया। उनकी दृढ़ मान्यता थी कि हिन्दू धर्म ग्रंथों में जो ब्राम्हणों की सर्वोच्चता प्रतिपादित की गई है वह स्वयं ब्राम्हणों की ही चाल है और ऐसा हिन्दू समाज के निम्न वर्ग का शोषण करने के लिए किया गया है। सितम्बर, 1853 ई. में आयोजित महिला शिक्षा समिति की एक बैठक को सम्बोधित करते हुए ज्योतिराव ने स्पष्ट किया कि निम्न और अछूत जाति के लोगों की शिक्षा से बढ़कर कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं है। इस बैठक में उनके मित्र सदाशिव गोवाड़े ने कहा कि हमारे देशवासियों की अज्ञानता ने उन्हें अंधविश्वासों और दासता का जीवन जीने क लिए बाध्य किया है। अज्ञानता समाज की खतरनाक बीमारी है, जिसको दूर करना आवश्यक है।

1854 ई. में बुड डिस्पेज में यह घोषणा की गई थी कि किसी भी छात्र को उसकी जाति के आधार पर शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश देने से रोका नहीं जायेगा। इससे ज्योतिबा के विचारा को बल प्राप्त हुआ। 1856 ई. में बम्बई सरकार ने भी ऐसी ही घोषणा की। ज्योतिराव ऐसे समाज की रचना करना चाहते थे, जिसमें सभी लोगों को शिक्षा देना चाहते थे, ताकि वे अपने लिए समान अधिकारों की मॉग कर सके एवं अपनी दयनीय स्थिति से मुक्ति पाने के लिए संघर्ष कर सके। ज्योतिराव ने जाति–पाति का भेदभाव मिटाने, अस्पृश्यता को दूर करने एवं अपने उदेश्य की तरफ बढ़ते रहे उन्हें अपने उद्देश्य की पूर्ति में पर्याप्त सफलता भी प्राप्त हुई।

Researcher's today
Vol.I NO.2 APR-JUN
(ISSN- 2231-4369)

सन् 1865 में महात्मा फूले ने "गुलाम गीरी" नामक पुस्तक लिखकर शूद्रों के लिए नवीन इतिहास की रचना की और मनुवादी व्यवस्था का सबक सिखाया। उन्होंने महसूस किया कि राजनैतिक गुलामी से सामाजिक गुलामी अत्यंत कष्टदायक है। उन्होन सामाजिक गुलामी से मुक्ति पान के लिए 24 सितम्बर, 1873 में "सत्य शोधक समाज" की स्थापना की। उन्होने प्राचीन वास्तविकताओं को जानने के लिए ऐतिहासिक साहित्य का अध्ययन किया और शूद्रों की खोज की इस प्रकार उन्होंने लगभग चालीस वर्ष तक दलित–शोषितों की सेवा की जिसे मांडली के कोलीवाड़ा की भूरि–भूरि प्रशंसा की गई। यह सम्मेलन विशेष रूप से 11 मई 1888 को आयोजित किया गया था। महात्मा ज्योतिराव फूले के प्रशंसा में रायाजीराव गायकवाड लिखते है कि " महामानव ज्योतिबा फूले" भारत के वाशिंगटन है। जिन्होंने शूद्र एवं अतिशूद्रों को खोजकर उनकी दासता का रहस्य ज्ञात कर जीवन पर्यन्त उनके अधिकारों की लड़ाई लड़ी। उनके चालीस वर्ष के जीवन संघर्ष को भुलाया नहीं जा सकता। महात्मा फूले ने अपने संघर्ष भरे जीवन में शूद्रो के लिए तालाब, शिक्षा के लिए स्कूल, विधवाओं का पुनर्विवाह, गरीबों के लिए अस्पताल और अन्तर्जातीय विवाह जैसे महान कार्य करते हुए 1890 ई. में मृत्यु को निर्वाण हा गए। दलित सामाजिकों के लिए किए गए आजीवन संघर्ष में महाराष्ट्र ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण दलित समाज महामानव ज्योतिबा फूले की कांति और कर्तव्य का अनुसरण करेगा, ऐसी उम्मीद पर हम कायम रहेंगे।

हरिजनों के उद्धार हेतु महात्मा फूले ने अनेक कार्यक्रम और सुधार कार्य कर समरसता का परचम लहराया। जो उस समय के समाज में साहस की बात थी। इसीलिए 19वीं सदी के महात्मा गांधी इन्हें अपना मार्गदर्शक मानते थे। शूद्रों को आज जो महत्ता मिली, इसके प्रथम प्रणेता महात्मा ज्योतिबा फूले हैं। इसीलिए भारतीय संविधान के निर्माता डॉ. अम्बेडकर इन्हें गुरू मानते थे।

महात्मा फूले का सारा जीवन दलितों और शोषितों के उद्धार हेतु समर्पित था। वे मानव को स्वावलंबी व स्वतंत्र देखना चाहते थे। उनकी प्रतिभाये, उनकी शिक्षा, उनका व्यक्तित्व, उनका कृतित्व मानवसेवा व सच्ची राष्ट्र भक्ति की प्रेरणा देती है। वे मानव की गरिमा, स्वतंत्रता और समानता के प्रबल प्रहरी थे।

Researcher's today
Vol.I NO.2 APR-JUN
(ISSN- 2231-4369)

सन्दर्भ – सूची

1. एस.एल. नागोरी, कांता नागोरी, आधुनिक भारतीय इतिहास की रूपरेखा, पृ. 116

2. बहुजन संगठक, संपादक – कांशीराम, 23 फरवरी 1998, पृ. 4

3. श्रीमती द्रौपती हरित, हमें जिन पर गर्व है, पृ. 133

4. एस.एल. नागोरी, कान्ता नागोरी, आधुनिक भारतीय इतिहास की रूपरेखा, पृ. 118

5. संपादक – कांशीराम, बहुजन संगठक, पृ. 7

6. प्रकाशक – श्री बालक राम पटेल, पिकप, छत्तीसगढ़, 2 दिसम्बर, 2001

I

E